तृतीय अध्याय

"नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित ग्रामजीवन"

तृतीय अध्याय

''नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित ग्रामजीवन''

(रतिनाथ की चाची, बलचनमा, नई पौध, बाबा बटेसरनाथ, दुखमोचन)

1) ग्राम जीवन एवं ग्रामव्यवस्था
2) रुढि परंपरा
3) अंधविश्वास
4) धर्मव्यवस्था
5) जातीय भेदाभेद
6) नारी की स्थिति
7) अवैध संबंध
8) शिक्षा व्यवस्था
9) शोषण के आयाम
10) राजनीतिक चेतना
11) प्राकृतिक आपदा
12) विवाह संस्कार
13) मृतक संस्कार
14) संगठन
15) निष्कर्ष

तृतीय अध्याय

''नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित ग्राम जीवन''

(रतिनाथ की चाची, बलचनमा, नई पौध, बाबा बटेसरनाथ, दुखमोचन)

प्रास्ताविक :-

साहित्य समाज जीवन का दर्पण है। साहित्य और समाज का संबंध पुरातनकाल से चलता आ रहा है। मानवी जीवन का विश्लेषण करने का कार्य साहित्य में हुआ है। साहित्यकार समाज का चित्रण अपने साहित्य द्वारा करता है। इसिलिए साहित्यकार और समाज का संबंध अन्योन्याश्रित रहा है। वह समाज में रहकर आदि से अंत तक समाज का और समाज से संबधित सभी घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण करता है। वह अपने साहित्य में नगर, ग्राम के साथ सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों का यथार्थ रुप में चित्रण करता है। हिंदी साहित्य में उपन्यास को महत्व रहा है। उपन्यास आज के साहित्य की सबसे अधिक लोकप्रिय और सशक्त विधा है, क्योंकि उसमें जीवन को उसकी बहुमुखी छवि के साथ व्यक्त करने की शक्ति होती है। इसलिए उसे 'जीवन का महाकाव्य' और जीवन का चित्रण आदि नाम से संबोधित किया है।

प्रस्तुत अध्याय में नागार्जुन के प्रतिकात्मक उपन्यास 'रतिनाथ की चाची', 'बलचनमा', 'नई पौध', 'बाबा बटेसरनाथ', 'दुखमोचन' आदि उपन्यास ग्रामजीवन से जुडे है। इन्हीं उपन्यासों में ग्रामीण जीवन से संबंधित घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण यथार्थ रुप में मिलता है। ग्राम में अज्ञान, अंधविश्वास, अशिक्षा, प्राकृतिक सौंदर्य, धर्म संबंधी मान्यताएँ, विविध रुप में होनेवाला शोषण, नारी चित्रण, सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, नए-नए प्रवाह, मूल्य-मान्यता, चेतना संघर्ष की भावना, विकास योजना आदि कई बातों का चित्रण इन्हीं उपन्यासों में हुआ है। नागार्जुन के इस उपन्यास में भारतीय ग्रामजीवन की तस्बीर मिलती है। ये उपन्यास ग्रामजीवन से जुड़े होने के कारण ग्रामजीवन की यथार्थता, वास्तविकता, भयावहता इनमें मिलती हैं। इसलिए नागार्जुन के

कृतियों में जनजीवन का सफल चित्रण मिलता है। इन कृतियों के आधार पर ही भारतीय ग्रामजीवन का गहराई से और वास्तविक रुप से चित्रण किया है। उसके आधार पर ग्रामीण पर विचार करेंगे।

नागार्जुन ने ग्राम जीवन की अनेक झाँकियाँ चित्रित करके ग्रामजीवन को ग्रामवाणी को शब्दकार में व्यक्त करने का सफल प्रयास किया है। शहरी जीवन में नहीं तो भारतीय ग्रामजीवन में अपनी प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर सुरक्षित रही है। उनके उपन्यास ही ग्रामजीवन का चित्रण करने में प्रभावी माध्यम बने हैं। नागार्जुन की रचनाएँ वास्तव में ग्रामजीवन की ही प्रतिनिधि है। अत: उसमें ग्रामजीवन के सभी पहलूँ का चित्रण यथार्थ लगता है।

1) रतिनाथ की चाची :-

नागार्जुन का 'रतिनाथ की चाची' (1948) उपन्यास मिथिला के जनजीवन के साथ एक विधवा ब्राह्मणी के करुण विगलित जीवन की कथा है। इस उपन्यास के केंद्र में रतिनाथ की चाची गौरी का निजी व्यक्तित्व है। गौरी के आँसूओं से भीगा चित्र नागार्जुन ने उपस्थित किया है। यह उपन्यास नागार्जुन का पहला आँचलिक उपन्यास है। आँचलिक उपन्यासों की शुरुआत नागार्जुन के उपन्यासों से ही होती है। डॉ. गणपतिचंद्र गुप्त के शब्दों में - ''आँचलिक संज्ञा का आविष्कार फणीश्वरनाथ रेणु द्वारा उनके 'मैला आँचल' (1954) की भूमिका में हुआ किंतु इस परंपरा का सूत्रपात इससे पूर्व ही नागार्जुन के उपन्यासों द्वारा हो चुका था।''[1] तो शंभूसिंह का कथन है - ''नागार्जुन का प्रथम उपन्यास 'रतिनाथ की चाची' हिंदी का प्रथम आँचलिक उपन्यास है और नागार्जुन हिंदी के प्रथम आँचलिक उपन्यासकार है।''[2] रतिनाथ की चाची उपन्यास का वर्ण्य उद्देश्य हमारे ग्राम समाज में प्रताडित विधवाओं की स्थिति का चित्रण करना है। 'रतिनाथ की चाची' उपन्यास में गौरी का जीवन वैधव्यपूर्ण है। भारतीय समाजव्यवस्था विधवा महिलाओं के प्रति कितनी क्रूर, अमानवीय एवं संवेदनहीन है, वह सब वैधव्य के असीम कष्ट से जूझती हुई गौरी को देखकर ही इसका पता लगता है।

'रतिनाथ की चाची' की भाव-भूमि दरभंगा जनपद के एक आंचल से सीमित है। मिथिला में स्थित शुभंकरपूर और तरकुलवा गाँव के जनजीवन की झाँकी यहाँ प्रस्तुत करते हुए समाज

में विधवा नारी की स्थिति, उस पर होने वाले शारीरिक, मानसिक अत्याचारों का सजीव चित्र हमारे सामने उपस्थित हो जाता है। शुभंकरपूर की कुल उपजाऊ जमीन का अधिकृत भूभाग तीन सौ बीघा है। उनमें से ढाई सौ बीघा धान की खेती है। और पचास बीघा रबी और भदई के खेत है। इसके अलावा बाँसो के जंगल, आमों के बाग, तालाब, गोचर आदि के लिए पचास बीघा है। इस गाँव में ढाई सौ परिवारों की आबादी है। और खानेवाले मुँह ग्यारह सौ है। इनमें गरीब ही अधिक है। यह गरीब भी दो श्रेणी में बँटे हुए है। एक ब्राह्मण और दुसरा गैर ब्राह्मण। गाँव के पढ़े लिखे लोग शहरों में जाकर बसे है। ब्राह्मणों में विद्या का प्रसार खूब था। ब्राह्मणों के सौ परिवारों में से पंद्रह परिवार ऐसे होंगे जो महादरिद्रों में शामिल थे। बाकी के लोग खेती न होने पर भी भर पेट खाने वालों में से थे।

ग्रामजीवन :-

तरकुलवा गाँव में विविध जाति के लोग निवास करते है। उनमें दुसाध, मुसहर, डोम, घुनिया, जुलाहा, ब्राह्मण, राजपुत, बनिया, ग्वाला आदि है। सडक के किनारे बसने वाले इस गाँव में आठ-दस पोखर है। पोखर में मछलियाँ पकडना गाँववालों का शौक है। लोगों का जीवन मुख्यत: खेती पर निर्भर है। प्राचीन परंपरा नुसार हल चलाना, बीज बोना, फसल काटना यही उनकी पद्धति है। खेती पद्धति में आधुनिकता का अभाव है। यहाँ की स्त्रियाँ फुरसद के समय तकली पर सूत कातने का काम करती है, और यही उनके जीविका का साधन भी है। यहाँ स्पष्ट है ग्राम का जीवन कृषिप्रधान है, जो कृषि पुरानी तथा अपग्रत पद्धति से की जा रही है। नये नये तंत्र का अभाव दिखाई देता है। गाँव में जातीय भिन्नता की विशेषता अधिक मात्रा में रही है। नागार्जुन ने इसका भी सही चित्रण किया है, ऐसा लगता है।

प्रथा :-

गाँव में विवाह की बड़ी अनूठी प्रथा है। ब्राह्मण समाज में विवाह करने वाले लोग 'सौराठ' प्रथा का निर्वाह करते है; जिसमें लोग इकठ्ठे होते है, बहुत कम समय में सरलता से विवाह संबंध निश्चित हो जाते है। हजारों विवाहर्थी इकठ्ठे होते है। कन्याओं की तरफ से उनके अभीभावक बड़ी तादाद में जमा रहते हैं। ''अपनी मौजूद स्थिति में भी ब्राह्मणों का यह वैवाहिक मेला अनुपम

है।''[3] यहाँ विवाह की यह अनोखी, अनूठी प्रथा रही है, जिसमें वे अपनी विरासत की रक्षा करते है। मिथिला के ब्राह्मण समाज में बहुपत्नी विवाह प्रथा प्रचलित है। रतिनाथ के नाना की दस विमाताएँ थी। जयनाथ के परदादा ने इक्किस शादियाँ की थी। सौराठ का जिस तरह लाभ है उसी प्रकार उसकी हानि भी है। तिब्बत में जैसे बहुपति प्रथा अभी तक जीवित हैं उसी तरह रतिनाथ की मिथिला में बहुपत्नी प्रथा रही है। सौराठ इन लोगों का बडा बाजार है। नारी का बाजार एवं बिकाऊ वस्तु के रुप में प्रयोग होता है। इससे भी अनेक कुप्रथाएँ बनी है। इसी तरह बहुपत्नी प्रथा नारी शोषण का एक आयाम है। उपन्यास में उसका यथार्थता से चित्रण किया है। बहुपत्नी प्रथा से ही अनमेल विवाह की शुरुआत हो गई है। अनमेल विवाह की शिकार केवल चाची ही नहीं थी तो असंख्य युवतियाँ हो चुकी है। असमय मृत्यु इस अनमेल विवाह का एक दुष्परिणाम ही है। शुभंकरपूर के भोला पंडित अनमेल विवाह किया करते थे। वह अनमेल विवाह कराने में बडे होशियार थे। उमानाथ की बहन प्रतिभामा को इन्होंने पैतालिस साल के एक महामूर्ख के चंगुल में डाल दिया। यह सब अनमेल विवाह का नतीजा है। इसपर प्रकाश डालते हुअे उपन्यासकार लिखता है - ''इसी तरह पचीसों लडकियाँ आपका नाम लेकर दच्छिन पश्चिम में करम कूट रही थी।''[4] यह कथन नारी की दयनियता, अपमानित, लांछित जीवन को स्पष्ट करने में सक्षम लगता है।

नागार्जुन ने मिथिला में किशोर युवतियों पर किस प्रकार अत्याचार होते थे इसका भी चित्रण किया है। कुलीनता बनाम अभिजात्य के नाम पर बलि-वेदी पर किशोर युवतियों को चढाया जाता था। कुलीनता के कारण बालिकाओं को अंध और वृद्ध व्यक्तियों के पल्ले बाँधने को बाध्य कर देते थे। कभी-कभार कुलीनता के बदले में रुपये प्राप्त कर लडकी बेचने का दुष्प्रयत्न भी होता था। 'बिकौआ-प्रथा' मिथिला ब्राह्मण समाज में प्रचलित है। बिकौआ निर्धन, कुलीन को बेचकर, अनेक विवाह कर अपना संपूर्ण जीवन ससुरालों में काटते हैं। ससुराल ही इनकी जीविका का साधन है। लोग इन ब्राह्मणों को आदरपूर्वक आमंत्रित कर इनसे अपनी कन्या का पाणीग्रहण करवाते है। एक एक बिकौआ बाईस बाईस शादियाँ करते थे। ''इंद्रमणि को भी अपनी तीन कन्याओं का भरण-पोषण आजन्म करना पड़ा, क्योंकि चार में से तीन दामाद परम अभिजात और महादरिद्र थे।''[5] यहाँ स्पष्ट है

गरीबी के शिकार सिर्फ नारी ही नहीं, बल्कि निर्धन पुरुष भी है। बिकौआ-प्रथा पुरुष शोषण का एक हीन रुप है। पेट की आग बुझाने के लिए मनुष्य क्या नहीं करता ? इस प्रश्न का यहाँ उत्तर मिलता है। नागार्जुन ने एक शोषण का एक नया आयाम सामने रखा है। शुभंकरपूर और तरकुलवा में कई प्रथाएँ रही है। जैसे, बहु का मुँह देखना, श्राद्ध पर कम से कम पाँच वर्षों तक ग्यारह व्यक्तियों को भोजन देना आदि। काशी में बहुविवाह प्रथा के साथ-साथ रखेलियों को रखना आदि प्रथाएँ प्रचलित है। काशी में धनी सज्जन की तीन विवाहिताएँ और पाँच रखेलियाँ होते हुए भी विधवा की ओर ललचाई निगाह से देखा करता है। साथ-ही-साथ यहाँ मुंडन छेदन की भी प्रथा है, अर्थात शिशु के बालों को जब पहली बार किसी तीर्थ में, या देवी देवता के स्थान में बाल कटवाते हैं, जो उसे 'मुंडन संस्कार' कहा जाता है। महाराष्ट्र के भी कई ग्रामों में ऐसी प्रथा दिखाई देती है।

धर्मव्यवस्था :-

भारतीय ग्रामजीवन में धर्म का काफी प्रभाव है। धर्म संबंधी काफी मान्यताएँ है। ग्रामवासी जी-जान से धर्म और धार्मिक मान्यताओं का निर्वाह करते है। पंडित धर्म के नाम पर पैसा कमाते है। धनवान लोगों को धर्म के बलबुते पर कीर्ति और यश मिलता है। जमीनदार, महाजन लोग अपना अवैध मार्ग से कमाया हुआ धन धर्म के नाम पर बाँटते है। शुभंकरपूर के जमीनदार रायबहादुर दुर्गानंदसिंह सौ रुपये के लिए प्रतिमास डेढ़ रुपया व्याज लेते है। उन्होंने धर्म के नामपर माँ के श्राद्ध पर समूचे भारत के महमहोपाध्याय उपाधि से विभूषित पंडितों को बुलवाया था। पंडितों का आने-जाने का खर्चा और उपर से एक सौ एक की विदाई देना। 'धर्म-दिवाकर' की उपाधि बाहर के इन पंडितों द्वारा प्रदान करना आदि घटनाएँ धर्म का विकृत रुप ही स्पष्ट करती है। धर्म और धन के नाम पर यहाँ शोषण का रुप लगता है। गरीब, निर्बल और हीन लोगों के लिए धर्म अन्याय एवं अत्याचार का प्रतीक है। धर्म के नामपर उनका शोषण हो जाता है। और वे विवश होकर जीवन जीते है। इस बारे में नागार्जुन लिखते है - ''समाज उन्हीं को दबाता है; जो गरीब होते है। शस्त्रकारों को बलि के लिए बकरे ही नजर आये। बाघ और भालू का बलिदान किसी को नहीं सूझा।''[6] यहाँ गरिबों के लिए बकरे की उपमा यथार्थ लगती है।

शुभंकरपूर और तरकुलवा गाँव के ग्रामवासियों की धर्म महत्वपूर्ण प्रवृत्ति रही है। धर्म का पालन करके अपने आराध्य की पूजा, उपासना करके उसे प्रसन्न करना कर्म था। रतिनाथ के पिता जयनाथ अपने ब्राह्मण धर्म के अनुसार प्रात:स्मरण, संध्या तर्पण, पंचदेवता पूजन, सप्तशती आदि सब श्रद्धा से करते है। इसके अतिरिक्त विद्यापति की महेशवानी भी बडी तन्मयता से पढते है। अपने भगवान शालिग्राम की बडी श्रद्धा से पूजा करना, काशी की यात्रा करना आदि भक्ति के विविध आयाम वे अपनाते है। गांव में लोगों की यह श्रद्धा थी कि अगर किसी से बडा पाप हो जाये, ब्रह्महत्या हो जाये, अवैध मातृत्व मिले तो उसे प्रायश्चित के लिए सिमरिया घाट जाना चाहिए। धर्म के अनुसार ब्राह्मण का हल जौतना, गाडी चलाना, गाडी पर चढना भी मना है। गौरी की माँ का मंगल को उपवास रखना, गौरी के गर्भ गिराने के ठीक ग्यारहवे दिन सत्यनारायण की पूजा करना, पूजा के अवसर पर गौरी द्वारा स्वच्छ सफेद शांतिपुरी धोती पहनना, पंद्रह ब्राह्मणों को खाना खिलाना आदि धार्मिकता के ही उदाहरण दिखाई देते है। इसप्रकार उपन्यासकार ने धर्मांधता के कई रुप स्पष्ट किये है। धर्म के नाम पर पंडितों का गरिबों को ठगाना, धनवान लोग धर्म के नाम पर पैसा लूटाना, हीन निर्बल लोगों का शोषण करना और उनपर अन्याय अत्याचार करना यही सब दिखाई देता है।

अंधविश्वास :-

अंधविश्वास यह सबसे बडी समस्या भारतीय ग्रामों में दिखाई देती है। नागार्जुन ने अपने उपन्यास में अंध विश्वास को बहुत महत्व दिया है। शुभंकरपूर गाँव में कई अंधविश्वास प्रचलित है, जो ग्रामवासियों के जीवन का एक अभिन्न अंग बन चुके हैं। जयनाथ का ताराबाबा पर विश्वास रखना, ताराबाबा के कहने पर गर्भ गिराने का यंत्र तैयार करना आदि अंधविश्वास है। ताराबाबा की किवदन्तियों पर वहाँ के लोग पूर्णत: विश्वास करते है; बाबा के घर चोरी करने के लिए आया हुआ चोर सुबह तक वहीं अटका रहा तथा ताराबाबा ने मरी गाय को फिर से जीवित किया आदि बाते उनके बारे में प्रचलित हो गयी है। ताराबाबा का प्रसाद भगवान का प्रसाद समझकर भाँग को पीना, हररोज बाबा का प्रसाद मानकर जयनाथ भांग पीता है। जिसकी उसे आदत पड गयी है। यह असर केवल बडे लोगों

पर ही नहीं तो छोटे-छोटे बच्चों पर भी पडा है। रतिनाथ को किताबे न मिलने से वह कुछ किताबें चुराता है और उसी चोरी को सब सहपाठियों से छिपाता है। जब लडके कहते है कि पर सौनी जाकर हम उस चोरी करने वाले पर जूगल कामति पर से कटोरा चलायेंगे तब रतिनाथ पूरी तरह घबरा जाता है और दुसरे ही दिन वह उसी जगह किताबे रख देता है। इससे यही स्पष्ट होता है कि बडे लोगों का प्रभाव छोटे-छोटे बच्चों पर भी पडता है। बुरे कर्म करने वाला भी अंधविश्वास के डर से सीधे रास्ते पर आ सकता है, चोरी करनेवाला रतिनाथ इसका उदाहरण है। जयनाथ खुदरती को एक बात बताता है कि विद्या का आरंभ बृहस्पतिवार को करना अच्छा होता है। यही अंधविश्वास का ही उदाहरण है।

जातीय भेदाभेद :-

जात-पात के बंधन ग्रामजीवन में कडे होते है। जाति-पाति के भेदभाव अज्ञान के कारण ही पैदा होते है। ग्रामीण जीवन में यह सबसे प्रमुख समस्या है। शुभंकरपूर और तरकुलवा में अनेक जाति के लोग रहते है। परंपरा के अनुसार वे अपना-अपना काम करते हैं। चाची के अवैध मातृत्व के कारण दम्मोफूफी जो सारी नारियों की प्रमुख है, वह चाची के घर को समाज से बहिष्कृत करती है। तब धोबिन, नाईन, डोमिन, चमाइन, खबास आदि सारी जाति की स्त्रियाँ जो घर का काम करती है वह भी आना बंद कर देती है। यहाँ स्पष्ट है जातियता का प्रभाव नारीयों पर भी रहा है। गाँव की रचना में भी जातियता के दर्शन होते है। इसका वर्णन करते हुए उपन्यासकार लिखता है - ''ब्राह्मण, राजपुत, बनिया, ग्वाला वगैरह गाँव के एक ओर थे। मुसलमान दुसरी ओर। छोटी जातिवाले उसके बाद सडक के किनारे लम्बाई में बसा था गाँव।''[7] चाची याने गौरी को गर्भवती होने पर भी जातीयता के प्रभाव के कारण ही बहिष्कृत किया जाता है। और उसकी माँ गर्भ गिराने के लिए चमाईन को बुलाती है। निम्न जातिवालें को उँची जातिवालों का झूठन खाना पडता है। और वे खुशी से खाते भी है। इस प्रकार नागार्जुन ने जातीयता का चित्रण उपन्यास में किया है।

उत्सव-पर्व :-

गाँव में उत्सव-पर्व बडे धुमधाम से मनाए जाते है। गाँव में दुर्गा पुजा अश्विन महिने में मनायी जाती है। कार्तिक में काली, चित्रगुप्त और कार्तिकेय की, माघ में सरस्वती की, चैत में राम, लक्ष्मण, सीता तथा उनके स्वजन-परिजन, अनुचर-परिचर की आदि कुल मिलाकर तेरह प्रकार की मूर्तिया बनाकर इनकी पुजा उत्सव के रुप में मानी जाती है। मुशहढ़ आदि जाति की देवता को 'सल्हेश', 'दुसाध' कहा जाता । (जिसमें पीपल पाकड़ बरगद के नीचे कुटीरों में अश्वारोही सामान्त भेष-भूषा में इन्हे आसानी से पहचाना जा सकता हैं।) इनकी पुजा, उत्सव के रुप में मानी जाती है। लोग आते है, आव-भगत होती है।

गाँव में रक्षाबंधन, विजयादशमी भी बडे ही उत्साह के साथ मनाए जाते है। वसंत पंचमी के दिन सरस्वती की नई प्रतिमा की स्थापना की जाती है और सालभर में वह प्रतिमा ज्यों-की-त्यों रहती थी। यहाँ भाई-दूज के त्यौहार की तिथि बडी महत्त्वपूर्ण है। दीवाली के बाद आनेवाली कार्तिक शुक्ल द्वितिया को जिनकी बहन जीवित हो तथा जिनकी शादी हो गई हो उसके घर पर जाकर भाई इस त्यौहार को मनाते है। उमानाथ के लिए तो यह भाई-दूज एक उत्सव के समान लगता है। दशहरे के दिन बेतिया में बहुत भारी मेला लगता है, इसमें गाय, बैल और घोडे खूब बिकते है। यहाँ स्पष्ट है गाँव में उत्सव उल्लास और आनंदमय वातावरण से मनाये जाते है। और गाँव के सभी लोग इनमें सहभागी होकर उत्सव मनाते है। इससे ऐसा लगता है कि वे एकता के प्रतीक है।

नारी स्थिति :-

भारतीय समाजव्यवस्था में नारीयों के प्रति कितना क्रुर और अमानवीय एवं संवेदनहीन बर्ताव किया जाता है इसका पता असीम कस्ट से जूझती हुई नारीयों को देखकर ही लगता है। नारीयों का स्थान सदा ही निम्न रहा है। ''पुरुष ने नारी का अत्यंत शोषण किया है। विधवा हो जाने पर नारी को इस अधिकार से वंचित रखा गया की वह दूसरा ब्याह कर सके, जबकि पुरुष के लिए कोई बंधन न था। इसे शास्त्रों द्वारा प्रमाणित करके पुरुष युगों-युगों से उसे प्रवंचित करता आ रहा है। विधवा प्रथा

के कारण ही अनेक सामाजिक समस्याओं का जन्म होता है।''[8] गाँव में भी यही स्थिति दिखाई देती है। नारी शोषण में विधवा नारी का शोषण अत्यंत भयावह दिखाई देता है। पति की मृत्यु के बाद समाज उसे दु:ख और दर्द भरे जीवन जिने पर बाध्य करता है। चाची का जीवन इसका उदाहरण है। चाची का अनमेल विवाह हुआ है। पति का मृत्यु दमे के कारण जल्दी हुआ है। बैद्यनाथ झा के कुलीनता को देखकर शुभंकरपुर में उसकी शादी की गई थी। चाची अर्थात गौरी तरकुलवा की सुंदर लडकी थी। लेकिन वह जल्दी ही विधवा हो गई थी। उसे एक लड़का उमानाथ और लडकी प्रतिभामा थी। प्रतिभामा का विवाह पैतालिस साल के व्यक्ति से किया गया था। वह भी वैधव्य का शिकार हो गयी थी। गौरी का वैधव्य दरिद्र कुल में लडकी ब्याहने का ही दुष्परिणाम था। जयानाथ चाची याने गौरी का देवर है, उसकी पत्नी याने रतिनाथ की माँ गुजर चुकी है। रतिनाथ को जब माँ की याद आती है, तब उसका शोषित रुप ही उसे नजर आता है। रतिनाथ दुखी तो है ही लेकिन अपने पिता के प्रति उसमें नफरत का भाव बढ़ता है।

गौरी अपने तरुण देवर जयनाथ के रुग्ण कामवासना का शिकार होकर जीवन भर आँसू बहाती हुई ग्लानि की अग्नि में प्रज्वलित होती रहती है। उसे गर्भ रहने पर असहाय, अपमानित और प्रताडित जीवन जीना पडता है। उसकी करुण कहानी ही वहाँ से शुरु होती है। विधवा दमयंती स्वयं आचरण भ्रष्ट होते हुअे भी समाजपतियों की कूटनीतिक शतरंज की कुशल खिलाडिन बन जाती है। उसका उपहास करके सामाजिक बहिष्कार का उपक्रम करती है। वह कहती है - ''उमानाथ की माँ व्यभिचारिणी है, पतिता है, भ्रष्टा है, छिनाल है, उससे हमे किस प्रकार संबंध नहीं रखना चाहिए। बोल-चाल बंद --- उमानाथ की माँ को समाज किसी भी हालत में क्षमा नहीं कर सकता।''[9]

बाबुराम गुप्त का कथन है - ''रतिनाथ की चाची उपन्यास में वर्णित भाभी-देवर संबंध हिंदी उपन्यास साहित्य की अमर निधि है। गौरी जैसी भाभी पाठकों की जिस व्यापक संवेदना को जाग्रत करने में सफल हुई है, वह हिंदी साहित्य में बहुत कम नारी-पात्र करने में सक्षम रहे है। विधवा गौरी अपने देवर जयनाथ की कामातुरता का शिकार हो विभिन्न स्तरों पर असहाय मानसिक पीड़ा सहन

करती हुई भी जयनाथ और उसके पुत्र रतिनाथ के प्रति अपने कर्तव्य पालन में चूक नहीं करती।''[10] ऐसी असहाय स्थिति में जयनाथ गौरी को छोडकर काशी चला जाता है। गौरी को सारी पुरुष जाति से नफरत होने लगती है। अनपढ़ होने के कारण उसे खत लिखकर बुला भी नहीं सकती थी। आखिर वह अपनी माँ के के पास तरकुलवा में चली जाती है। उसकी माँ बुधना चमाइन को बुलाकर गर्भ गिराने में सफल होती है। ''गौरी की माँ समाज के लिए वाघिन थी। इतना बडा 'कुकांड' हो जाने पर भी तरकुलवा में किसी ने गौरी की माँ को खुल्लम खुल्ला कुछ कहा नहीं।''[11] यह कथन साहसी नारी को स्पष्ट करता है। यहाँ नागार्जुन ने नारी शोषण के विविध आयाम दिखाए है। नारी का शोषण, विधवापन, अवैध मातृत्व, पतिद्वारा शोषित, परित्यक्ता, अनपढ़ आदि रुप में हो रहा है। लेकिन अभी तक समाज में इसके खिलाफ किसी ने आवाज नहीं उठाई है। लेकिन उपन्यास में गौरी की माँ इसके लिए अपवाद लगती है। गौरी का भाई जयकिशोर वापस आने से पहले ही गौरी शुभंकरपुर लौटती है।

गाँव में आने के बाद उसकी ही चर्चा शुरु होती है। दमयंती के सामाजिक बहिष्कार के कारण उससे सभी नाता तोड लेते है। सिर्फ रतिनाथ के ही मन में चाची के लिए स्नेह था। चाची भी रतिनाथ से बहुत स्नेह करती थी। बचपन से ही उसे दुलार देती आयी थी।

बैद्यनाथ झा की बर्सी पर चाची का बेटा उमानाथ आता है, तब दमयंती उसको गौरी के बारे में सबकुछ बताकर उसको भड़काती है। उमानाथ चाची को बहुत पिटता है। अपने विवाह के लिए रुपये इकठ्ठा करने में जुट जाता हैं। उमानाथ का विवाह कमलमुखी से होता है। लेकिन वह अपनी माँ को कभी माफ नहीं करता बल्कि घुटन, अपमान की जिंदगी जिने के लिए छोड देता है। कमलमुखी चाची से अच्छा बर्ताव नहीं करती लेकिन बाहर के औरतों से अच्छा बर्ताव करती है। चाची के लिए उसके दिल में नफरत ही नफरत है। वह अंत तक चाची को समझ नहीं पाती तब चाची के मन में आत्महत्या के विचार आते है। लेकिन समाज के डर से वह आत्महत्या भी नहीं कर पाती। वह रात दिन अकेली बैठकर तकली पर सूत निकालने का काम करती है। धिरे-धिरे गाँव उसके कलंक को भूल जाता है। गाँव में कोई नई घटना होने पर पुरानी बात सब भूल जाते है।

चाची घर के वातावरण से उब जाती है। गाँव में हैजा बीमारी का संकट आता है। चाची पहले से ही कृश थी। हैजें की बीमारी ने उसे और भी कमजोर किया। रतिनाथ उसके लिए दवा लेकर आया था। लेकिन चाची ने दवा लेने से इन्कार कर दिया। जैसे ; उसे मौत का बुलावाही आया था, उसे ठुकराना नहीं चाहती थी। चाची रतिनाथ को अपनी अंतिम इच्छा बताती है कि मेरी चिता को केवल तुम ही आग लगाना क्योंकि उमानाथ को उसने कभी भी बेटा समझा नहीं। उन्होंने उसे दुख के सिवा कुछ भी नहीं दिया। आखिर चाची बीमारी में ही चल बसती है। इसी तरह चाची का जीवन शुरु से लेकर अंत तक दुखदर्द और पिडादायक बना रहा। समाज ने उसे घृणा करके बहिष्कृत किया तो उसके अपने खुद के लडके ने पिटा, इससे ज्यादा और क्या दुख चाची के लिए हो सकता है। एक विधवा की स्थिति और उसका दर्दभरा जीवन इसका अच्छा चित्रण यहाँ अंकित किया है। ''उपन्यासकार नागार्जुन ने 'रतिनाथ की चाची' तुलना में बेजोड है। तुलना की दृष्टि से कोई भी उससे जोड नहीं रखता।''[12]

अवैध संबंध :-

शुभंकरपुर में अवैध यौन संबंध के भी उदाहरण दिखाई देते है। बहुविवाह पद्धति के कारण अवैध यौन संबंध बढ रहे है। बहुविवाह पद्धति के कारण विधवा को फिर से शादी करने की इजाजत न होने के कारण अवैध संबंध का चित्रण आया है। ''इंद्रमणि की लडकियाँ जनक किशोर और शकुंतला जिनका ब्याह बिकौआ से हुआ था उसमें एक का अपने चचेरे भाई से और दुसरे का कुल्ली राउत के जवान बेटे से अवैध संबंध था। शकुंतला के पति की सात शादियाँ हुई थी और जनककिशोरी के पति की दस।''[13] इसीसे स्पष्ट होता है कि बहुविवाह के कारण अवैध संबंध को बढावा मिलता है। पति जब अनेक पत्नियों को रख सकता है तब पत्नी भी बाहर अवैध संबंध रखेगी इस पर नारी शोषण के माध्यम से उपन्यासकार ने सोचा है और सौत के कारण भी शोषण को बढावा मिलता है, इस पर भी प्रकाश डाला है।

शिक्षा - व्यवस्था :-

शिक्षा, उत्सव, शादी, आदि में भेदभाव दिखाई देता है। ग्रामों में शिक्षित अशिक्षित भेदभाव दिखाई देते हैं। शुभंकरपूर में शिक्षा प्राप्ति का अधिकार ब्राह्मणों ने अपने पास ही रखा है। क्षुद्र संस्कृत के स्तोत्र याद नहीं कर सकता। कुली राउत को संस्कृत के कई स्त्रोत्र याद है। कहते संकोच होता है - गायत्री भी उसे आती थी। संकोच इसलिए कि जिस गायत्री के लिए ब्राह्मण-बटुकों का उपनयन संस्कार होता है, जो सिर्फ द्विजों की चीज है, उस महान प्रणव को एक शूद्र जान जाय, यह असह्य है। जाने कैसे ? उसने सीख ली थी। ऐसे निम्न जाति के कुल्ली राउत को ब्राह्मण कैसे सहन कर सकते है। जयनाथ को किसी ने इसके बारे में बताया तो वह फुफ्फार उठी - "साले की चमडी उधेड लूँगा। शूद्र है तो शूद्र की भाँति रहे।"[14] शुद्र की स्थिति पर यहा प्रकाश डाला है। प्रगतिवादी नागार्जुन दलित शोषित, पीडित की व्यथा चित्रित करने में सफल रहे है। जाती व्यवस्था, भेदाभेद नीति के कारण सामान्य एवं शुद्र अशिक्षित दशा है, परिणामत: उसका शोषण बढ रहा है। रतिनाथ भी इसके बारे में सोचता है कि अगर यह ब्राह्मण होता तथा ब्राह्मण के घर में पैदा होता तो निश्चय ही उसके बदन पर फटे पुराने कपडे न होते। बच्चों को हमारी झूठन खाकर और हमारी पहिरन पहनकर नहीं पलना पडता। और इन्हें स्कूल और पाठशाला में जाने के लिए विरोध नहीं होता। निम्न जाति को उच्च जाति के समान अधिकार मिल जाते तो वे पढ़-लिखकर समाज में अच्छी स्थिति प्राप्त कर लेते; और उनका शोषण नहीं होता न अत्याचार होते। यहाँ स्पष्ट है आज भी गांवों में उच-निचता का भेदभाव रहा है। ग्रामों में निम्न जाति को पढ़ने के लिए मना किया जाता है। इसीसे ग्राम विकास में समस्या निर्माण हो गयी है। आज सरकार की उदारनीति के फलस्वरुप उसमें घिरे-घिरे परिवर्तन आ रहा है।

शुभंकरपुर की पाठशाला में पढ़नेवाले लडकों की संख्या तेरह थी। उसमें से पाँच शब्द - रुपावली, धातु रुपावली और अमर कोश पढ रहे थे। प्रायमरी स्कूल में तीस-पैंतीस लडके पढ़ रहे थे। रतिनाथ मुंशी जयवल्लभलाल खजुर की छडी को हमेशा डरता था। लेकिन इस पाठशाला का शिथिल अनुशासन रतिनाथ के लिए स्फूर्तिपद साबित हुआ। रतिनाथ को पढने की इच्छा बहौत थी लेकिन

जयनाथ उसे पढ़ने के लिए शब्द रुपावली, धातु रुपावली, अमरकोश सब लाकर देने के लिए टाल देता था। इसीलिए उसकी पढाई पूरी तरह नहीं हो पाती थी। और वह अंदर ही अंदर आत्मग्लानी से भर उठता था। इसी वजह से रतिनाथ अपने दोस्त के किताब की चोरी करता है और कटोरा चलाने की बात जानकर वापस वहीं रख देता है। पाठशाला में शिक्षा के बजाय बच्चों को अन्य कामें भी करने पडते थे जैसे, रतिनाथ का पंडितजी के घर का काम करना, बैलों को पानी पिलाना आदि। शिक्षा में अन्य काम करना उचित नहीं है वह एक गलत व्यवहार है इसका प्रमाण यहाँ मिलता है। नारी को हमेशा ही शिक्षा से दूर रखा है, गाँव में लडकियों की पढाई की ओर ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता। अत: रतिनाथ की चाची भी अनपढ़ है। अत: अनपढ रहना इसके शोषण का मुख्य कारण है। यहाँ स्पष्ट शिक्षा व्यवस्था मं किताबों की कमी रहेगी तो पढाई समाप्त होगी। ग्राम व्यवस्था में अशिक्षा के मूल में भी यही कारण है। लगता है आज महाराष्ट्र सरकार ने सभी छात्रों को पाठ्यपुस्तक मुफ्त में देने की योजना बनाई ई, यह एक ग्राम शिक्षा प्रसार का अच्छा कदम लगता है। नागार्जुन ने इस दृष्टि से भी विचार किया है - ऐसा लगता है।

शोषण के आयाम :-

गाँव में हमेशा जमीनदार लोग किसानों को लुटते है, उनका शोषण करते है। शुभंकरपूर के जमीनदार दुर्गानंद सिंह महाजनी करके ब्याज के रुपये किसानों को लूटते थे। लेकिन धिरे-धिरे किसानों में क्रांति होने लगी। उन्होंने अपना संगठन बनाकर अपने हक के लिए लडने लगे, तब जमीनदारों ने अपना रुख बदला। लेकिन उत्तेजित किसान एवं लोगोंने उसे धमकाया और कहा - ''आपका खादी का कुर्ता पहले हम अपने खुन से तर कर देंगे उसके बाद जाकर जमीनदारी प्रथा उठा दीजिएगा।''15 ब्राह्मणों के एक गुट द्वारा किसानों का साथ देना, किसानों का अपनी मांगो पर अडिग रहना, सभा, जुलूस, गिरफ्तारी, सजा, जेल, हडताल, पिटाई, रिहाई आदि दमन चक्र और विरोधी कार्य का चलते रहना, ताराचरणद्वारा आंदोलन को आगे ले जाना, नेतृत्व करना, कडा संघर्ष होना, अंत में किसानों की जीत होना, खेतीपर उनका अधिकार होना आदि घटनाएँ किसान क्रांति एवं चेतना का प्रतीक है। यहाँ स्पष्ट है, खेतिहार, मजदुर, किसान अब जाग उठा है उनमें क्रांति की लहर उठी है और वह संघर्ष के लिए आगे बढ़ रहा है और अंत में उसकी जीत होगी। यही उपन्यासकार ने चित्रित किया है।

राजनीतिक चेतना :-

ग्रामआंचल का विकास होने के लिए ताराचरण जैसे लोगों के नेतृत्व की जरुरत है। क्योंकि इन्ही के कारण ही विकास की धारा तेज बनेगी। ताराचरण किसानों का नेता बना। उसने चाची को अखबार पढ़कर देश में घटित घटनाओं से अवगत कराया। डॉ. सुदेश बत्रा के मतानुसार - ''नागार्जुन की क्रांतिकारी चेतना ने ग्रामीण नारियों को भी राजनीति आंदोलन में सक्रिय भागीदार बनाया है। उन्होंने 'रतिनाथ की चाची' उपन्यास में अनपढ़ चाची के मुख्य से कहलवाया है - मैं पढ़ी लिखी नहीं हूँ, मगर इतना समझती हूँ कि पच्चीस साल के सवालों ने अपने यहाँ जो नया संसार बसाया है उसके अंदर जाकर राक्षसों की बडी से बडी फौज भी मात खा जायेगी।''[16] इसीतरह ताराचरण देश-विदेश की घटनाओं से अवगत कराने का कार्य और गाँव में अखबार शुरु करने का कार्य करके लोगों में नई चेतना जगाने का काम करता है। उसका यह कार्य समाजसेवी नेता के समान है जो आदर्शप्रद लगता है।

यह उपन्यास गांधीवाद से प्रभावित है। नागार्जुन के इस रचना में हडताल, जुलूस, चर्खा, बहिष्कार, अहिंसा आदि का चित्रण किया है। घर-घर में चर्खा चलाना, सुत कातना आदि घटनाएँ इसके उदाहरण है। चर्खा चलाने तथा सूत कातने से मजदुरों को मजदुरी मिलती है। चाची को प्रतिमाह पच्चीस-तीस रुपये मिलते है। जिसपर उसका उदरनिर्वाह चलता है। मगर इसमें भी बेईमानी होती है इस पर नागार्जुन ने उँगली उठाई है। कम मजदुरी देना, सूत को कम नंबर बताना, जिससे दाम कम मिलना आदि रुपों में शोषण दिखाई देता है। गांधी विचारधारा में भी भ्रष्टाचार, कुकर्म आदि होना ऐसा यहाँ दिखाई देता है।

प्राकृतिक आपदा :-

गाँवों में नैसर्गिक आपत्ती तो आती ही रहती है। मानव निर्मित समस्याओं के साथ प्राकृतिक आपदा भी ग्रामों में आती है। अज्ञान के कारण गाँव के लोग इसे 'कोप' मानते है। इस उपन्यास में नागार्जुन ने शुभंकरपुर के प्राकृतिक आपत्ति का चित्रण किया है। गाँव में मलेरिया फैलने की वजह से कई लोगों की जाने गई। भोला पंडित का बुखार उन्नीस दिन तक रहने से वह चल बसा। तो

फुफी भी इस बीमारी की चपेट में आ गई। चाची को दम्मो फुफीने ही बहिष्कृत किया था। लेकिन सब भुलकर चाची ने इसकी सेवा की थी, लेकिन वह नहीं बची। गाँव के होले में चौदह औरते थी, उसमें से छः औरते की मृत्यु हो गयी थी। लाशों को उठानेवाला कोई नहीं था। और कुछ दिनों के बाद हैजे की बीमारी फैल गयी और हैजे की बीमारी की वजह से ही चाची का देहांत हो गया। दवाइयाँ होने पर भी चाची ने उसे खाने से इन्कार किया क्योंकि चाची जिंदगी से थक चुकी थी। इसी तरह गाँवों में मलेरिया, हैजा आदि बीमारियाँ फैलने पर भी स्वास्थ्य की पूरी सुविधाएँ न होने से कई लोगों की जाने गई। स्पष्ट है कि गाँवों में स्वास्थ सुविधा न होने से मृत्यु का प्रमाण बढ रहा है आदि का चित्रण मिलता है।

मृतक संस्कार :-

शुभंकरपूर गाँव में मृत्यु के बाद के संस्कार भी अनोखे है। रतिनाथ चाची के चिता की परिक्रमा करके मुँह में अग्नि का स्पर्श करता है। और यह विधि तीन बार होती है। फिर चिता जलाई जाती है, चिता बुझाकर बची खुची दो हड्डियाँ रखके बाकी रक्षा समेटकर एक छोटा चबूतरा बना दिया जाता है। इसके उपर तुलसी का पौधा लगाया। हड्डियाँ ले जाकर गंगा में प्रवाहित करना। श्राद्ध की विधि का आयोजन करना आदि विधि कर्म किये जाते थे। मृतक संस्कार विधि तेरह दिनों तक चलती थी। एकादशाह को कच्ची रसोई का भोज और द्वादशाह को चुग-दही का भोज का रतिनाथ आयोजन करके मृतक संस्कार पुरा करता है। यहाँ अग्नि संस्कार, समाधि और श्राद्ध-भोज मृतक संस्कार के अंग लगते है।

यहाँ कई त्यौहार के गीत गाये जाते है। शुभंकरपूर में शादी होने के बाद इसीतरह के गीत गाये जाते है। जिसे मंगल गीत भी कहा जाता है। त्यौहार में दिवाली और भाई-दूज का त्यौहार प्रमुख रहता है।

अभावग्रस्त जिंदगी :-

अभावग्रस्तता ग्राम जीवन का शाप ही लगता है। गाँवों में याता-यात के साधन, भौतिक सुविधा आदि का अभाव है। शुभंकरपूर में और तरकुलवा में याता-यात के साधनों की कमी प्रमुख रुप से नजर आती है। बैलगाडी, घोडागाडी की व्यवस्था है। वह भी ठिक समय पर नहीं मिलती

तथा जादा पैसे देने पडते है। याता-यात साधनों के साथ-साथ स्वास्थ्य सुविधा भी नहीं होती। अस्पताल की सुविधा न होने के कारण चाची की माँ को भी एक चमाइन को बुलाना पडता है। बीमार होने पर वैद्य से दवा ली जाती है। वह भी जाति-पाति का भेदभाव करता हुआ दिखाई देता है। निम्न जातियों को वह दुर से ही दवा देता है। इसी तरह गाँवों में अभावग्रस्तता दिखाई देती है। आज धिरे-धिरे इसमें शिक्षा की वजह से परिवर्तन दिखाई देता है। सरकार ने विकास नीति एवं विकास योजनाओं के कारण भी बदलाव आ रहा है।

नागार्जुन ने इस उपन्यास में एक विधवा ब्राह्मणी की कथा का आधार लिया है। विधवा की व्यथा अंकित की है। शुभंकरपूर गाँव की सरिताओं, प्राकृतिक सुषमा की पृष्ठभूमि पर ग्राम जीवन का यथार्थ चित्रण किया है। इसकी भाषा शैली ग्रामीण और परिष्कृत है। इसमें संस्कृत निष्ठ शब्दों से युक्त भाषा भी है, जैसे गौरी की माँ संस्कृत में श्लोकों का उच्चारण करती है। विचारपूर्ण भाषा का स्वरुप भी इसमें दिखाई देता है। ''समाज उन्हीं को दबाता है जो गरीब होते हैं। शास्त्रकारों को बलि के लिए बकरे ही नजर आए। बाघ और भालू का बलिदान किसी को नहीं सूझा।'' तथा ''किसी भी युग में स्त्री को अमृत पीने का सुयोग नहीं मिला, पुरुष को अमृत पिलाकर वह स्वयं विषपान ही करती आई है।''[17] इसी तरह व्यंग्यपूर्ण भाषाशैली का भी प्रयोग इसमें हुआ है।

नागार्जुन ने 'रतिनाथ की चाची' उपन्यास में मुहावरों का प्रयोग किया है। जैसे - लूट लाओ कुट खाओ, मूर्ख का लडका मूर्ख हो सकता है, मगर पंडित का लडका पंडित नहीं होगा, दस का काम, देश का नाम आदि।

वास्तव में किसी विशिष्ट भूमि भाग के निवासियों आदि का वास्तविक अंकन करने के लिए उसी क्षेत्र विशेष की बोली, शब्दों, मुहावरों आदि का मुक्त प्रयोग प्राय: आंचलिक उपन्यास का एक महत्त्वपूर्ण तत्व है। नागार्जुन ने 'रतिनाथ की चाची' उपन्यास में बोली भाषा का प्रयोग किया है- सराई, सल्हेश, दुसाध, धिवही, आमिल, तस्मई, राउत, खवास, पौनी, बिसहत्थी, सरयूपारी, मनखप, मुठिया, कजरौटा, खदुका आदि का प्रयोग किया है। भाषा शैली में संवाद का भी प्रयोग हुआ है तथा इन संवादों के नाटकीयता व्यंग्यात्मकता के कारण एक अलग सहजता और सरलता की अभिव्यक्ति मिली है।

नागार्जुन ने उपन्यासों में पात्रों को पूरी तरह उजागर और विश्लेषित करने के लिए चरित्रांकन की सभी शैलियों का उपयोग किया है। नागार्जुन के उपन्यासों में पात्रों की संख्या कम है। उपन्यास में भाषा सरल, सहज, तीखी, पैनी और मार्मिक है। पात्रानुकूल और भावानुकूल भाषा का प्रयोग करने में नागार्जुन सिद्धहस्त है। कथा वर्णन और कथोपकथन दोनों में भाषा का बडा सद्दोश्य अर्थ-गर्भित व्यंजनापूर्ण प्रयोग मिलता है। कथावर्णन, पात्रों के चरित्र-विश्लेषण, देशकालवातावरण के वर्णन के अवसर पर सरल, स्वाभाविक, बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है।

नागार्जुन के 'रतिनाथ की चाची' का मूल उद्देश्य विधवा नारी की दयनिय स्थिति का चित्रण करना ही है। ग्राम जीवन में विधवा नारी को कौन-कौन सी मुश्किलों का सामना करना पडता है तथा समाज में उसको किस तरह रहना पडता हैं उसका चित्रण उपन्यास में हुआ है। अपने देवर के कारण चाची गर्भवती होती है यह खबर जब गाँव में फैल जाती है तब देवर उसे अकेली छोडकर भाग जाता है। लेकिन चाची को उस पर टूटनेवाले पहाड को झेलना पडता है। गाँव में वह मुँह दिखाने के काबिल नही रहती। उसका अपना सगा बेटा भी उसकी पिटाई करता है लेकिन कोई भी उसे समझ नहीं पाता। अंत तक वह अपने ही घर में उपेक्षित नारी बनकर रह जाती है। उसकी बहु आने पर वह भी अपनी सांस को समझ नहीं पाती और दुसरे लोगों का सुनकर उसपर अन्याय अत्याचार करती है। चाची की स्थिति इतनी बदत्तर होती है कि इसकी अपेक्षा वह मौत को गले लगाना पसंद करती है और इसीतरह वह खुद अपनी मौत का बुलावा बन जाती है।

ग्राम जीवन में विधवा नारी की स्थिति, जनजीवन में प्रचलित अंधविश्वास, रुढि-परंपरा, अन्याय, शोषण, भौतिक सुविधाओं का अभाव आदि का भी विस्तृतता के साथ चित्रण किया है। अत: ग्रामजीवन में विधवा नारी की स्थिति कितनी भयावह होती है, दयनिय होती है इसका सबसे बडा उदाहरण है 'रतिनाथ की चाची'। प्राकृतिक प्रकोपों के कारण ग्रामजीवन भयावह बना है। वहाँ कई प्रकार की बीमारियाँ है, दवाइयों की कमी, अंधविश्वास का प्रभाव, स्वास्थ्य की असुविधा, अज्ञान का प्रभाव होने के कारण कई लोग दवा की अपेक्षा दुवा पर विश्वास रखते है, ऐसा यहाँ लक्षित होता है।

नागार्जुन गांधीवाद से प्रभावित होने के कारण प्रस्तुत उपन्यास में हडताल आंदोलन, जुलूस आदि का भी चित्रण हुआ है। शिक्षा सभी के लिए अनिवार्य आवश्यक होनी चाहिए इस पर भी उपन्यासकार ने बल दिया है। शिक्षा से भी ग्रामजीवन का विकास संभव है ऐसी धारणा नागार्जुन की रही है। इसी कारण ही इसके प्रसार, प्रचार पर अधिक बल देते है।

निष्कर्ष :-

यहाँ स्पष्ट है नागार्जुन ने ग्रामजीवन का यथार्थ रुप में चित्रण किया है। सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, आर्थिक स्थिति का प्रभावी चित्रण करके शुभंकरपूर, तरकुलवा आदि गाँवों के जनजीवन को वाणी देने का प्रयास किया है। ग्राम बोली शब्दों का प्रयोंग किया है। यह उपन्यास ग्राम जीवन की तसबीर लगती है।

2) बलचनमा :-

'बलचनमा' (1952) नागार्जुन का दूसरा प्रतिनिधि और सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है। इस उपन्यास का कैन्वस उनके अन्य उपन्यासों से अधिक व्यापक है। दरभंगा जिले के साधनहीन अभावग्रस्त और निर्धन कृषक परिवारों के जीवन को गहरी मार्मिकता से उद्‌घाटित किया गया है। इस उपन्यास का कालक्रम सन 1937 से पूर्व का है। "सन 1937 तक इन ग्रामीण जनोंपर ईश्वरीय विधान के नाम पर जमीनदारों द्‌वारा किये गये अनवरत शोषण एवं क्रुर दमन के विरुद्‌ध उभरती प्रतिहिंसा की सशक्त अभिव्यक्ति ही इस उपन्यास का प्रमुख प्रतिपाद्‌य है।"[18] कृषकों में पनपती जमीनदार विरोधी चेतना का वाहक एवं प्रतिनिधि पात्र बलचनमा है। वह अपने चारित्रिक गुणों के कारण भारत के समस्त कृषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता प्रतीत होता है। इस क्षेत्र के आर्थिक अभावों का यथातथ्य वर्णन करते हुए उपन्यासकार ने वहाँ के जनजीवन से संबंध बारीक-से-बारीक विवरण देकर उपन्यास ग्रामजीवन को बहुत सहज और विश्वसनीय बना दिया है। जहाँ जमींदारों के नृशंसता, दुराचरण, क्रूरता, हृदयहीनता का वर्णन है। लगता है सामंती जुल्मों की कथा एक एक शब्द से प्रतिध्वनित हो रही है।

'बलचनमा' उपन्यास का नायक बलचनमा ही सारी कथा कहता है। पात्रों तथा आँचलिक परिस्थितियों का चित्रण उसीके दृष्टिकोण से किया गया है। सरोजिनी त्रिपाठी के अनुसार - " 'बलचनमा' का कथानक यद्यपि कृषकों-जमीनदारों के संघर्ष की कहानी है, फिर भी बलचनमा आधा मजदुर और आधा किसान है। बलचनमा की कथा आत्म-बीती कथा है। विशेष रुप से चौदह से बाईस वर्ष तक की आयु का खंडचित्र है।"[19]

'बलचनमा' उपन्यास में बलचनमा किसानों का प्रतिनिधि है। उसके हृदय में विद्रोह की प्रबल आग है। वह किसान आंदोलन में सक्रिय साँझेदारी करता हुआ दिखाई देता है। यह संपूर्ण उपन्यास एक ईमानदार भारतीय किसान की गौरव गाथा बन गया है। वह अपने मानवीय अधिकारों की प्राप्ति के लिए पुरानी परंपरा से विद्रोह करने वाला युवक है।

जीविका :-

दरभंगा आँचल में लोगों का मुख्य व्यवसाय खेती है। इनकी खेती करने की पद्धति पूर्णतया पुरानी है। धान बोना, उसको पानी देना, फसल काटना आदि पद्धति से होती है। तो जमीनदार अत्याधुनिक साधन और सुविधा का उपयोग करते है। जमीनदारों के देशी आमों के हजार पेड है, इसके अलावा सीसम, महुआ, तून, इमली, जीमड आदि जैसे तरह-तरह के सैकडों पेडों से भरा एक जंगल भी है। साथ-ही-साथ भैंस भी पाले जाते है। बलचनमा जमींनदारों के यहाँ बचपन से यही भैंस को सँभालने का काम करता है। यहाँ स्पष्ट है कि जमीनदारों की खेती प्रगत खेती है, वहाँ पशुपालन के लिए नौकर रखने की प्रवृत्ति है, बलचनमा इसका उदाहरण है।

इस आँचल में रहन-सहन का ढंग आर्थिक परिस्थिति के अनुसार है। जमीनदार बडे शानो शौकत से रहते है। उनका पहनावा भी उसी प्रकार है, तो सामान्य किसानों में केवल शरीर ढँकने के लिए जितने आवश्यक होते है उतने ही कपडे है। बलचनमा बचपन में केवल लंगोटी पर रहता है। लोगों की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण इनकी यह हालत दिखाई देती है। इसका वर्णन करते हुअे नागार्जुन कहते है - "कुछ मत पुछो भैया, मझले मालिक भारी कंजुस थे, देखते तुम तो कह उठते

हाय राम, मैली धोती, पीले दाँत, यही डेढ़ लाख रुपैया का आदमी है।'' गाँव की आर्थिक दशा सामान्य रही है। यहाँ तक भी सामान्य स्तर के है एकाद दुसरा व्यक्ति बहुमुल्य वस्तुओं को अपनाता है। चौधरी इसका उदाहरण है।

यहाँ ब्राह्मण रजपूत, बनिया, चमार, मुसलमान आदि कई जातियाँ रहती हैं। लेकिन उच्च कहीं जानेवाली जातियाँ निम्न जातियों पर अत्याचार करती हैं। गाँव के बूढे वैद्य निम्न जातिवालों के घर नहीं जाते, चाहे वह कितने भी बीमार क्यों न हो। इसी तरह जमींदार भी निम्न जातिवालों को निम्न दर्जा देते है। दूर से ही खाना देना, उनको मारना, गालियाँ देना ऐसे ही अत्याचार उनपर करते है। बलचनमा के गाँव में पंडितों का राज था। बलचनमा जब फूल बाबू के साथ पटना जाता है तब सबसे पहले फूलबाबू बलचनमा के बढे हुए बाल काट देते है, दाढी-मूँछ साफ करते है। तब बलचनमा कहता है - ''इसी तरह सानदला बात छँटाये, दाढी-मूँछ साफ किये मेरी बस्ती में पहूँच जाते तो परलय (प्रलय) मच जाता।''[20] दाढी-मूछे काटकर प्रलय का कारण बनना यह अनोखी मनोवृत्ति है और इस पर प्रकाश डालने का काम उपन्यासकार ने किया है।

जमींदारोद्वारा शोषण :-

जमींदार विभिन्न आयामों के द्वारा अज्ञानी, अनपढ गाँववालें का शोषण करते है ऐसा यहाँ दिखाई देता है। नागार्जुन के पैनी दृष्टि से यह भी घटना छूटी नहीं। उसका चित्रण उन्होंने यथार्थता के साथ किया है। जमीनदारों द्वारा निम्न जाति के साथ बुरा बर्ताव करना, बारह वर्षिय ग्वाले बलचनमा का चौधरी घराने की छोटी मालिकाइन के यहाँ चारवाहे का काम करना, नौन और सरसों के तेल के साथ महुआ की रोटी कलेवा, खुश होने पर सूखा या बासी पकवान देना,सडा आम, फटे दूध का बदबूदार छेना, जूठन की बची कडवी तरकारी देना, बदबूदार दही देना तथा मालिकाइन का कहना कि ऐसी चीज उसके बाप-दादे ने भी नहीं खाई होगी। मझले मालिक का बाराह रुपये कर्ज के बदले में बलचनमा की दाढ़ी से सात कट्टा जमीन हड़प लेना, मरणासन्न दादी की इच्छापूर्ति के लिए पोखर से मछली पकड लाने पर मलिकाइन द्वारा आम की आधी जली चेली से बलचनमा की पीठ पर दाग देना

आदि घटनाओं से जमींदारों की शोषण प्रवृत्ति स्पष्ट होती है। बलचनमा ने अपने ही घर की गरीबी तथा विवशता में सत्रह साल बिताएँ। जमीनदारों द्वारा शोषित उनकी जिंदगी रही। सभी जमीनदार ऐसे ही थे। उन्हें सिर्फ जनता को लूटना मालूम था। फूलबाबू के पिता भी वैसे ही है। सौ कसाई के एक कसाई, न लडके का मोह न लडकी का, न भाई का मोह न बहन का, न बाप का मोह न माय का ! हाय रुपैया, हाय रुपैया । --- खेती गृहस्थी के अलावे सूद-ब्याज पर दस-बीस हजार की वस्तु वहसील थी उनके हाथो में।'' यह कथन जमीनदारों की प्रवृत्ति को स्पष्ट करता है। किसान का कोई भी जाति बची नहीं। दुसाध, मुसहर, चमार, पासी, चुनिय, जुलाहा आदि लोगों की बस्तियाँ खेत मजदूर सभी मुसीबत में अपना जीवन चलाते है, इसका वर्णन देखिए - फूल बाबू के बाप इन्हीं गरिबों की जमीन जजाद हडप-हडप कर औकातवाले बने थे। इन लोगों को लूटते थे। कभी किसानों पर कूर्की लगाते तो कभी नीलामी। अदालत, हाकिम, दारोगा-पुलिस सभी जमीनदारों के गुलाही ही थे। किसान किसी भी तरह से उनके हाथ से नहीं बचते थे। जमींनदारों के नौकर भी जनता को लूटते है। राधाबाबू के ससूर जमींदार लखपती थे। जब उनके नौकरों को दस रुपये से ज्यादा तनख्वाह नहीं थी तब ये नौकरी तनख्वाह की कमी लूट-पाट से पूरा करते है। इसका चित्रण करते हुअे उपन्यासकार लिखते है - ''रयत को लूटने में जमीनदार के नौकर-चाकर किसी बात की परवाह नहीं करते। हरी बेगारी से लेकर कोहड-कद्द तक रैयत की एक एक चीज पर मालिकों का एकछत्र अधिकार रहा है। --- जमीनदार का भी खजाना भरते हैं और अपना भी घर भरते है।''[21] ''कृषकों की निर्धनता, बेकारी, शोषण और अत्याचार के अनेक चित्र नागार्जुन के उपन्यासों में भरे पडे है। यह सब सामंती व्यवस्था की देन है। सामंत अब नहीं है किंतु सामंती चेतना अब भी समाज से समाप्त नहीं हुई। सामंतो, जमीनदारों और महाजनों ने नये मुखौटे धारण कर लिए है। अत्याचार और शोषण समाज में ज्यों का त्यों विद्यमान है।''[22] बाबूराम गुप्तजी का यह कथन आज की परिस्थितियों में भी उचित लगता है। यहाँ स्पष्ट है कि जमीनदार और उनके नौकर किसी न किसी रुप में किसानों एवं खेत मजदूरों को लूटते रहे है। गरीबी, अर्थभाव, अशिक्षा के कारण शोषण बढता गया है ऐसा ही लगता है।

अंधविश्वास :-

अँचल विशेष में अंधविश्वास के कारण भूत-प्रेत व ओझा पर अत्याधिक विश्वास होता है जिसकी आड में स्वार्थी और व्यभिचारी ओझा की अश्लीलता तथा बीभत्सता को बढावा मिलता है। बलचनमा अपने आँखों से इन दृश्यों को देखता है। बलचनमा की छोटी मालिकाइन की लाडली नौकरानी सुखिया कभी-कभी चीख मारकर रो पडती थी। और नंगी होकर जीभ निकालती हुई कहती, ''ही ही ही ही मैं काली हूँ पोखर पर जो बौना पीपल है उसी पर रहती हूँ। खा जाऊँगी समूचा गाव। बकरा दो बकरा --- ।'' सुखिया पर भूत सवार देख मालिकाइन भगवती मैया को मनाने लगती तथा झाड-फूंक, पूजा-पाठ, टोना टापर करनेवाले ओझा दामो ठाकुर को बुलाती। दक्षिणवाले एकांत घर में वे बैठते। बडे मालिक की बाल विधवा पुत्री जयमंगला को भी इस अवसर पर बिचवई के लिए बुला लिया जाता क्योंकि मालिकाइन ओझा से परदा करती थी। अनेक आडंबरों के साथ ओझा भूत झाडना आरंभ करता है - वह कहता है - ''ओम काली काली महाकाली इंद्र की बेटी ब्रह्मा की साली फू --- इतना कहकर कुछ देर तक होंठ पटपटते और फिर खवासिन की छाती पर फूँक मारते।''[23] थोडी देर बाद पसीने से भीगे हुअे दामो ठाकुर बाहर निकलते। इस तरह सुखिया को साल में एक दो बार भूत पकडता तब दामो ठाकुर को बुलाया जाता और वह शांत होती। बलचनमा कहता है 'भूत या प्रेत अक्सर बाँझ औरतों को ही पकडता है।' स्पष्ट है सुखिया की दमित अतृप्त वासना जब उद्दीप्त होती तो उसकी तृप्ति के लिए ही यह ढोंग रचा जाता। इस तरह भूत-प्रेतों को शांत करने के बहाने ओझा व्यभिचार करते है। अर्थात लोगों के अंधविश्वास का लाभ ओझा इस तरह उठाते थे। इतना ही नहीं तो फसल अच्छी आने पर लोग बकरे की बलि देवी के सामने देते है। शादी पर भी बलि के रुप में कई बकरे चढ़ा दिये जाते। यहाँ स्पष्ट है कि अपनी इच्छापूर्ति के लिए बलि देने की प्रवृत्ति अधिक मात्रा में दिखाई देती है। ओझा धार्मिक व्यक्तियों की दमित वासना की शिकार गाँव की युवतियाँ तथा विधवा नारी ही है। नारी शोषण का यह एक रुप लगता है। यदि नारी शिक्षित होगी, तो वह समस्या हल होने की संभावना है ऐसा मुझे लगता है।

धर्म का आधार लेकर अंधविश्वास को बढावा देने का कार्य ग्रामों में हो रहा है तथा उसेही धर्म मानने की प्रवृत्ति रही है। बारिश के लिए, बाढ न आये इसलिए और अच्छी फसल के लिए मनौति के रुप में कालि माई को दो-दो बकरों की बलि देना, बरहम बाबा को फूल-छत्र एवं पित्तरों का पिंड दान देना, बाबा कुसेसरनाथ को घी-दूध का दान करना, मुंडन, छेदन, सुन्नत सराघ और चालिसा करना आदि इसके उदाहरण है। यह सभी धार्मिक विश्वास के रुप में अपनाये जाते है। अंधविश्वास और धर्म के प्रभाव के कारण दबे लोग जमीनदारों के अत्याचार का शिकार होने पर भी जमीनदारों को भगवान का अवतार मानते है। कोई उसके खिलाफ आवाज नहीं उठाता। यदि कोई प्रयास करे तो उसे पाप मानते है। इस पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुअे डॉ. सुमित्रा त्यागी लिखती है - ''बलचनमा उपन्यास में भी निम्न जातीय लोगों में उच्च समझने तथा उनसे दबने की प्रवृत्ति उनकी हीनता की दयोंतक है। अत्याचार करने पर भी मालिक को भगवान के अवतार समझे जाते हैं। औरते उनके विरुद्ध सोचना भी पाप समझती है। बलचनमा की माँ भी इस विचार की है। --- कलकत्ता और टाटानगर पहूँचानेवाले श्रमिक-कारीगर, मिस्त्री फोरमैन बन गये। बलचनमा ने अनुभव किया कि गाँव में निम्न जातियों को जमीनदार वर्ग का सन्मान और चापलूसी करने की आदत पड गई थी।''[24]

प्रथा-परंपरा :-

धर्म के साथ-साथ गाँव के लोग अपनी रस्म-रिवाज या परंपरा को भी महत्त्व देते हैं। जमीनदारों के यहाँ ऐसी परंपरा है कि जिस गाँव में लडकी ब्याही जाती है उसी गाँव में हर साल सौगात भेजी जाती है। उसी प्रथा के अनुसार बलचनमा के मालिकाईन के मायके से सौगात महिने में दो-बार आ जाती है। इस सौगात में दही-छाँछ, चिवडा से भरा चंगेरा केले की घौंद पक्वानों या मिठाइयों से भरी डालियाँ, धोती, साडी, लाख की चूडियाँ और भी बहुत कुछ आ जाता। शादी का गौना करना यह भी एक रिवाज है। गौने के पहले सूचना दी जाती है। तत्पश्चात दोनों तरफ से गौने का दिन निश्चित होता है। गौने का संदेश देने के साथ-साथ सिंदूर और शगुन का सामान भेज दिया जाता है। गौने के एक दिन पहले लडकी के घर लडका और उनके लोग जाते है। वहाँ कई रस्मे निभाई जाती है यह रस्म इस प्रकार

मनायी जाती है। इसका वर्णन देखिए - गौने के दिन दुल्हन लाल रंग की साडी पहनती है, उसके आँचल में धान-पान की पत्ती, सुपारी और हल्दी बाँधी जाती है और दुल्हे को जाते समय थोडी दूर तक महफे में रहना पडता है। लडकी के यहाँ से जाते समय पक्वान, दही, केरा, समधिन के लिए साडी, लाख की चूडियाँ आदि सामान लेकर भाई आता है। लडकी डोली में बिठाई जाती है और उपर से गुलाबी रंग की साडी डाली जाती है। दुल्हे के घर आने पर दुल्हा-दुल्हन को डोली पर सवार होकर आँगन में आना पडता है। औरतें गीत गाती है। गौने के साथ यह रस्म पुरी होती है। गाँव में लोग अज्ञानी है। गाँव में शिक्षा का कोई स्थान नहीं होता। शिक्षा का अधिकार केवल ब्राह्मण और जमीनदारों का था। अगर गाँव में स्कूल हो तो भी पढ़ने का अधिकार केवल लडकों को दिया जाता है। बलचनमा की बहन रेबनी इसी कारण अज्ञानी रहती है। इसका वर्णन देखिए - ''लढाई-लिखाई, इलिम, विद्या, सबकुछ लडकों के भाग में। लडकी जब तक बिन ब्याही रही, खाएगी-पिएगी, थोडा बहुत शौक-सिंगार करेगी बस।''[25] बलचनमा की बहन रेबनी पढ़ी लिखी न होने के कारण माँ की बीमारी पर बलचनमा को खत भी नहीं लिख पाती।

नारी स्थिति :-

समाज में नारी का निरंतर शोषण होता आ रहा है। फिर वह नगर हो या गाँव। आज नारी पढी लिखी होने के कारण कुछ हद तक उपर उठ चुकी है, लेकिन पूरी तरह से आजाद नहीं हो पायी। गाँव में तो यह स्थिति बहुत ही भयावह बनी है। बलचनमा का गाँव जमींदारों का गाँव था। केवल जमीनदारों का ही यहाँ राज चलता है। जमीनदारों की बूरी नजरों की शिकार गाँव की युवतियाँ होती है। उसकी अस्मत का खिलवाड का साधन माननेवाले जमीनदार अपनी भोग का साधन उन्हें बना ते थे। इस पर भी उपन्यासकार ने प्रकाश डाला है। गाँव में किसी की लडकी सयानी हुई तो सबसे पहले जमींनदारों की नजर उसकी तरफ जाती है। दौलत के नशे में ये लोग अपना-पराया कुछ नहीं समझते। गरीबों के पास दौलत तो होती नहीं, उनकी दौलत उनकी इज्जत होती है। लेकिन यह बात जमीनदार नहीं समझते। ''बडे घरों का क्या जवान, क्या बूढे, बहुतों की निगाह पाप में डूबी रहती थी। गौना

होकर कोई नवेली किसी के घर जाती तो इन लुच्चों की आँख उसकी घूँघट के इर्द-गिर्द मँडराया करती। --- कई बार ऐसा होता है कि जिसे देखने को बाप बेताब हो उठता उसी पर बेटा भी फिदा ---- किसी की इज्जत-आबरु की बेदाग रहने देना उन्हें बर्दाश्त नहीं था।''[26] इस बारे में गुप्तजी का कथन है - ''यह उच्च वर्ग चरित्र से भ्रष्ट भी है। 'बलचनमा' उपन्यास में नागार्जुन ने यह सिद्ध किया है कि ग्राम की बहू-बेटियाँ को आधी पौनी आँखों से देखने वाला यह वर्ग कितना भ्रष्ट कितना जालिम रहा है। इस उपन्यास के नायक बलचनमा की छोटी बहन रेबनी का छोटे मालिक शील भंग करने का असफल प्रयत्न करते है।''[27] सभी जगह यही हाल था। बलचनमा की माँ का इस पर विश्वास नहीं था। लेकिन रेबनी उसकी शिकार होती है। तब उसकी आँखे खुल जाती है। वह जल्दी से रेबनी का गौना करने के लिए तैयार हो जाती है।

नारी शोषण का दुसरा रुप विधवा नारी है। विधवा का पूर्नविवाह नहीं होता था। गाँव की यह परंपरा होती है कि विधवा नारी मरते दम तक वैसी ही विधवा रहे, उसकी भावनाएँ कुचला दी जाती थी। विधवा नारी विधवापन के कारण अवैध संबंध के लिए विवश होती थी। जयमंगला इसका उदाहरण है। जमीनदार की बेटी जयमंगला मुसलमान दर्जी के साथ भाग जाती है, तब गाँव में हंगामा होता है। लोग समझते है खानदान की नाक कट गई। यहाँ स्पष्ट है कि झूठी प्रतिष्ठा के कारण नारी का शोषण हो रहा है।

बलचनमा के गाँव में अस्पताल की सुविधा और याता-यात की व्यवस्था का आभाव है। इसीकारण बलचनमा की दादी बीमार पडने पर उसके लिए दवा लाना असंभव सा था। अगर गाँव में कोई बीमार होता तो मधुबनी के सरकारी अस्पताल से दवा लाता। लेकिन बलचनमा की आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं थी। जमीनदारों के घर डाक्टर आते। ''बाबू भैया लोग थे की छोटी बीमारी में भी उनके यहाँ डाक्टर बुलाये जाते। अढ़ाई रुपया उनकी फीस थी, एक रुपैया एक्के का भाडा। दवा का दाम अपना उपर से दो। बापरे । गरीबों के पास पथ-पानी के लिए भी धेला - पैसा नहीं रहता, डॉक्टर की फीस और दवा के दाम का क्या ठिकाना?''[28] इसीसे उनकी आर्थिक स्थिति का भी पता चलता

है। अर्थाभाव के कारण दवाइयाँ भी मिलना मुश्किल था, ऐसा लक्षित होता है। यहाँ याता-यात की सुविधाओं का आभाव के कारण बलचनमा अपनी ही शादी के लिए दो-तीन कोस पैदल ही चलकर जाता है।

प्राकृतिक आपदा :-

गाँव के लोग मुख्यत: खेती पर निर्भर रहते है। खेती में भी प्राकृतिक आपदा के कारण अनेक बार अनिश्चितता रहती है। यह आपत्तियाँ बाढ़, भूचाल, अकाल आदि कई रुपों में दिखाई देती है। इस बारे में डॉ. गगराणी का कथन है - "सूखा, बाढ, अकाल आदि प्राकृतिक प्रकोपों का शिकार भी अंतत: निम्न वर्ग ही होता है। देश का बिहार प्रांत इन प्राकृतिक प्रकोपों से कई शताब्दियों से जूझता चला आ रहा है। चूंकि नागार्जुन और रेणू के उपन्यासों का कथ्य बिहार जनजीवन ही है। इसलिए सहज ही उनके उपन्यास में इसका चित्रण हुआ है।"[29]

बलचनमा के गाँव में एक बार भूचाल आता है। गरीबों को कुछ जादा हानि नहीं पहुँचती क्योंकि उनके घर छोटे-छोटे थे। लेकिन जमीनदारों की हवेली गिरती है, उसमें डिप्टी साहब की नई दुल्हर मर जाती है। महापुर में खान बहादुर का मकान गिरा, वल्ली बाबू का घोडा मरा, गोसाई पोखर के उत्तर के मैदान में बडी दरार पडी तो सीतामढी में काफी नुकसान हुआ, सडके फट गई, सरकारी बंगले, थाना, कचहरी, अस्पताल, स्कूल, पोस्ट ऑफीस आदि सब बेकार हो गये। रेल्वे लाईन, तार के खंबे उखड गये, इतना ही नहीं तो देवी-देवता के मंदिर भी इससे नहीं बच सके। एक बार बाढ़ भी आयी थी। इसी तरह गाँव के लोग प्राकृतिक आपत्ति के शिकार होते है। इसीकारण ग्रामविकास में कठिनाइयाँ पैदा होती है।

गाँव के लोगों में नशापान भी दिखाई देती है। बलचनमा के जमीनदार हुक्का पीने के आदी है तो दामो ठाकुर शराब पीता है, साथही भांग जादा पीता है। वह दिन में दो-दो बार भांग पीना जरुरी समझता है।

राजनीतिक चेतना :-

गाँव में राजनीति और भ्रष्टाचार का संबंध दिखाई देता है। स्वतंत्रता संग्राम में अनेक लोग कुद पडे थे। उनमें ही एक है फूलबाबू। बलचनमा को वे अपने साथ पटना लेकर गये थे। वहाँ उन्होंने बलचनमा को कमीज लेकर दी, बाल ढंग से कटवाये। बलचनमा गलियाँ फटकार से बच गया था। फूलबाबू के प्रति उसके दिल में श्रद्धा, आदर्श आदर ने जगह ली थी। नमक आंदोलन में जब फूलबाबू गिरफ्तार हो गये और लौटे तो गांधीवादी पद्धति से जीवन बिताने लगे। उन्हें नौकर की आवश्यकता नहीं रही तो बलचनमा घर लौट आया। कुछ दिन वह राधाबाबू के बरहमपुरा के आश्रम के रहा। फिर बटाई पर खेत लेकर मजदुरी करने लगा। सोशालिस्ट राधाबाबू के प्रभाव से बलचनमा सामाजिक उत्पीडन के कारणों की वास्तविकता समझने लगा। एक बार बलचनमा अपने परिवार पर किये गये मालिक के अत्याचारों से खिन्न होकर काँग्रेसी नेता फूलबाबू के पास जाता है तो उसे उनके अपने मालिक के पैर पकडने का परामर्श मिलता है। उसके पश्चात उसे फूलबाबू द्वारा गाँव में कुओं की खुदाई के लिए प्राप्त धन में से धन कमाने की खबर मिलती है तो उसके हृदय को ठेस पहुँचती है। इस बारे में कुन्ती अपनी क्षुब्धता के साथ कहती है - ''ये लोग जुलुम करते है बेटा, देते है दो और कागज पर चढाते है दस। इमान धरम इनका सब डूब गया, तेल जरे तेली का और कटे मशालची का। छोटे मालिक का सर बेटा आया था। अफसर बन के खैरात बाटने। हो न हो, हजार पाँच सौ उसने जरुर मार लिया होगा --- पता लगाना बेटा, मेरे नाम के रुपैया चढा है।'' इससे गाँव में व्याप्त भ्रष्टाचार सरकारी विकास योजना में अडसर भ्रष्टाचार ही है, यह यहाँ स्पष्ट होता है। बलचनमा की फूलबाबू के प्रति श्रद्धा हमेशा के लिए उठ जाती है। वह काँग्रेस के विरोध में कहता भी है - ''स्वराज मिलने पर बाबु-भैया लोग आपस में ही दही मछली बाँट लेंगे, जो लोग आज मालिक बने बैठे है आगे भीतर माल वही उडावेंगे।''[30] यह कथन नेताओं के स्वार्थी मतलबी वृत्ति को स्पष्ट करने में सक्षम लगता है।

प्रगतिवादी चेतना :-

जमीनदारों द्‌वारा किसानों की भूमि हडपने के षडयंत्र को देखकर समाजवादी नेता डॉ. रहमान राधा बाबू को जमीनदार खानबहादुर के विरुद्‌ध किसानों को संघर्ष करने का परामर्श देता है। डॉ. रहमान नागार्जुन के विचारों का वाहक है और किसानों में प्रगतिवादी चेतना लाने का कार्य करता है। यह स्पष्ट होता है, किसान भूमि की रक्षा के लिए संगठित होते हैं, बलचनमा भी वालिटिंयर बनता है। फसल काटने पर छी-झपटों में एक किसान मर जाता है। पुलिस दफा 144 तोडने के अभियोग में किसानों को गिरफ्तार कर लेती है। बलचनमा और उसके साथियों को पिटा जाता है। इसी प्रकार गाँव में जनता में विद्रोह के स्वर दिखाई देते है, उनमें जागरुकता, अधिकारों के प्रति सजगता एवं क्रांति के बीज अंकुरित होते है तथापि मुख्यत: नेताओं की स्वार्थी वृत्ति उसे पनपने नहीं देती। यहाँ स्पष्ट है, अब धीरे-धीरे किसानों, मजदुरों में अपने अधिकारों के प्रति सजगता पैदा हो रही हैं। लेकिन पुलिस, सरकारी अफसर के साथ जमीनदारों की दोस्ती होने के कारण भ्रष्टाचार को बढावा देकर गंदी राजनीति खेलकर वे लोग इस चेतना को दबाने का भरकस प्रयास करते है। इस पर भी उपन्यासकार ने प्रकाश डाला है। इसके संदर्भ में डॉ. विवेकी राय का कथन है - ''प्राचीन संस्कृति के साथ धर्म जुड गया और उसने उसे एक मधुर रुप दे दिया परंतु आधुनिक सभ्यता से राजनीहित जो जुड गई तो उसने उसे मानवी स्तर पर विकृति और कडवाहट से परिपूर्ण कर दिया।''[31]

बलचनमा में प्रगतिवादी चेतना उपन्यासकार ने पात्रों के चरित्र-चित्रण के सहारे उसे स्पष्ट कर भी दिया है। राधेश्याम कौशिक के शब्दों में - ''बलचनमा में हमें 'गोदान' के होरी जैसी विवशता दृष्टिगोचर नहीं होती, बलचनमा का विद्रोह और प्रगतिशील चेतना उसे युग की परिवर्तित स्थितियों में ग्रामीण मजदुर की नई पीढी का प्रतिनिधि बना देती है। नागार्जुन के उपन्यासो में बलचनमा का चरित्र जितना स्वाभाविक संवेदनपूर्ण तथा प्रभावशाली बन पड़ा है, उतना अन्य कोई नहीं।''[32]

ग्रामजीवन में लोकगीत लोककथा का अपना एक अलग स्थान होता है। गाँव में त्यौहार, पर्व, संस्कार, विवाह विरह के अवसर पर गीत गाये जाते है। बलचनमा अपना विवाह करके आमों के बाग से जा रहा था। तब एक आदमी आम के बाद में गुनगुनाता हुआ दिखाई देता है -

"सखि हे मरजल आमक बाग।
कुहु कुहू चिकरार कोइलिया
झींगुर गावए फाग ।
केत हमर परदेस बसइ छायि।"[33]

'बलचनमा' उपन्यास में स्वाभाविकता लाने के लिए आँचलिक भाषा का प्रयोग किया है - लाठी - लाख की चूड़ियाँ, खम्हेली - छोटा खंबा, बहिया-पुश्तैनी गुलाम, सुगर खौका - सुअर खाने वाला, बकुली - बाँकी, करजान - केले का बाग, मलिकान - मालिकों का पूरा खानदान, अमावट - आम का पापड, भूइकंप - भूकंप, असघी - अश्र आदि। ऐसे कई शब्द जिन शब्दों को समझने में अन्य भाषा-भाषी पाठकों को कठिनाई हो सकती है। इसकी भाषा पात्रानुकूल, व्यंग्यपूर्ण, ध्वन्यात्मक तथा मुहावरे-कहावतों से परिपूर्ण है। डॉ. गोपाल राय का इस बारे में कथन है - "बलचनमा की कहानी में कुछ ऐसी सच्चाई, सहजता, भोलापन, ईमानदारी और निरीहता है कि पहली मुलाकात में ही उसमें गहरी रुचि पैदा हो जाती है।"[34] जनबोली के शब्द, पात्रानुकूल भाषाशैली उपन्यास की कथावस्तु में ग्रामीणता लाने में सफल रहे है, ऐसा लगता है।

निष्कर्ष :-

'बलचनमा' उपन्यास में उपन्यास का प्रतिपाद्य क्रांति-चेतना है। ग्रामांचलों में स्थित सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिकता का चित्रण यथार्थ रुप में चित्रित हुई है। गाँव में स्थित रुढ़ी, परंपरा, अंधविश्वास आदि का चित्रण किया है। जमींदारी प्रथा, जमीनदरों का लोगों पर अत्याचार, भ्रष्ट राजनीति का यथार्थ शब्दों में वर्णन किया है। गाँव में नवचेतना और जागरुकता पैदा हुई है। और लोग अपने अधिकार के लिए संघर्ष करते है इसके साथ ही गाँव में परिवर्तन होने का चित्रण भी दिखाई देता है।

बलचनमा एक प्रतिनिधी पात्र है, ग्रामजीवन में आने वाले बदलाव का प्रतीक बलचनमा है। नागार्जुन ने अपने पात्रों के द्वारा अपने विचार स्पष्ट किए है। राजनीतिक भ्रष्टाचार का विरोध करके आदर्श, देश के हित की राजनीति की आवश्यकता पर बल दिया है। प्राकृतिक आपदा के कारण

ग्रामजीवन पीडामय बना है। यदि सरकार उचित उपायों पर अमल करेगी तो इससे ग्रामवासी मुक्त हो सकते है। आज की ग्राम व्यवस्था की नींव आर्थिक स्थिति का आधार खेती ही है - जब तक इससे नये तंत्र का प्रयोग नहीं होता तब तक उससे प्रगती होना संभव नहीं इस पर भी उपन्यासकार ने प्रकाश डाला है। अत: ग्रामजीवन का दस्तावेज बलचनमा उपन्यास लगता है।

3. नयी पौध :-

नागार्जुन के 'नयी पौध' उपन्यास का आधार शादी के अवसर पर नारी पर होने वाले अत्याचार का वर्णन है। 1953 में इसका प्रकाशन हुआ। नागार्जुन ने मिथिला गाँव का सामाजिक जीवन चित्रित किया है। उपन्यास का कथानक मिथिला के नौगछिया स्टेशन का है। नौगछियाँ ग्राम की पुरानी मान्यताएँ, आचार-विचार, विवाह संबंधी कुरीतियाँ, नारी का होनेवाला शोषण आदि पर विचार किया है। किंतु स्वतंत्र भारत में जो प्रगतिशीलता की नई लहर फैली हुई है, उसका स्पर्श मिथिला के इस नौगछिया ग्राम को भी हुआ है। डॉ. बेचेन के मतानुसार - ''नागार्जुन ने मिथिला का चरित्र विकास उपस्थित किया है। सभी चरित्र मिथिला से संबद्ध हैं मिथिला के ग्रामीण जीवन से उनका इतना घनिष्ट परिचय है कि हम उनके प्रत्येक उपन्यास में एक ऐसा आत्मीय भाव पाते है, जो बहुत थोड़े कथाकारों को सुलभ हो पाता है।''[35] 'नई पौध' नागार्जुन की सबसे नई रचना है। बेमेल शादियों की समस्या का चित्रण किया है और उसका समाधान भी प्रस्तुत किया गया है। कथानक पुराना होते हुए भी लेखक ने सर्वथा नये अनुबन्ध, नई परिस्थिति और नये वातावरण में उसे चित्रित करके सर्वथा मौलिक रुप में उपस्थित किया है। नवीन पीढ़ी के माध्यम से अन्याय और अत्याचार का विरोध और नवीन चेतना का विकास आदि का मिलाफ किया है। नौगाछिया गाँव में रहनेवाले विभिन्न स्थितियों के परिवारों की दशा का यथार्थ चित्रण उपन्यासकार ने करके सामाजिक यथार्थ को पूर्णता प्रदान किया है।

गाँव में खोखाई पंडित को सात लडकियाँ थी। रामेसरी, महेसरी, भुवनेसरी, गुनेसरी, गुजेंसरी, वानेसरी, धनेसरी। रामेसरी बडी लडकी थी, जो तेरह साल से विधवा थी। बाकी छ: बेटियों को खोखा पंडित ने बेच डाली थी। सभी बहने माँ-बाप को सराफ दिया थी। कोई गूँगे के पल्ले पडी थी

बोडम के पल्ले कोई तीन जिला पार फेंक दी गई थी, तो कोई पाँच सौ कोस पर उनमें से चार को भाग्य ने वैधव्य के बीहड़ जंगल में डाल दिया था। एक पगली हो गई थी, एक को उसके आदमखोर पति ने किरासन तेल की मदद से जलाकर खाक कर डाला था। खोंखाई पंडित ने नारी विक्रय के सभी पुराने रिकार्डों को काट दिया है। उन्होंने अपनी छः कन्याओं को बेचा है। खोखाई पंडित के इस कृत्य से ऐसा लगता है कि नारी शोषण के साथ नारी विक्रय और विभिन्न समस्या पैदा हो जाती है। अनेक किशोर युवतियाँ शिकार होकर जीवनभर सिसकती रहती है। अनमेल विवाह का आवश्यक परिणाम है, वैधव्य। इसका यथार्थ चित्रण नागार्जुन ने किया है।

नारी की स्थिति :-

यहाँ नारी शोषण का चित्रण बड़ा सफल यथार्थ हुआ है। मिथिला जनपर ग्रामीण अंचल है। और वहाँ नारी के लिए शिक्षा सुविधा नहीं है। परिणामत: अनमेल विवाह, वैधव्य जीवन, बहु-विवाह तथा नारी विक्रय एवं कुलीनता आदि समस्याओं का निर्माण हुआ है। खोखाई पंडित अपनी पंद्रह साल की नतनी बिसेसरी की शादी पचास, साठ उम्र के बुढे आदमी चतुरानन चौधरी से तय कर चुके थे। चतुरानन चौधरी पाँचवी बार शादी कर रहा था। फिर भी नौ सौ रुपये देकर एक पंद्रह साल के लडकी के साथ शादी करना चाहता था। चतुरानन चौधरी के पहले पाँच लडके थे, उनकी भी शादी हो चुकी थी। फिर भी वह दुल्हा बनना चाहता था। लेकिन रामेसरी अपनी लडकी की शादी बुढे आदमी के साथ नहीं करना चाहती थी। वह अपने पिता से घृणा करती थी। वह कहती है - ''लडकी के जीवन को धूल में मिलाने का उसे क्या अधिकार है ? बाबा (पिता) को यह क्या हो गया है। दुल्हे को आने तो दो, उस बुढ़े के माथे पर अंगार न डाल दूँ, तो रामेसरी मेरा नाम नहीं एक बुढ़ा मेरी लडकी की सींध भरेगा मुँह झुलसा दूँगी मरदुए का।''[36] बिसेसरी भी अपनी इस शादी से नाखुश थी। इसी तरह नारी विवशता का चित्रण मिलता है। साथ में रामेसरी के बिससेरी के प्रति लगाव का परिचय मिलता है।

मिथिला आंचल में युवा पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के बीच संघर्ष का वर्णन भी मिलता है। गाँव में खोखा पंडित, घटकराज, चतुरा चौधरी, फतुरी, मुखिया आदि पुरानी पीढ़ी के प्रतिक्रियावादी

लोग है तो युवा पीढ़ी के दिगंबर, माहे, बुलो, टुनाई, वाचस्पति प्रतिनिधित्व करते है। गाँव में नौजवानों का एक गुट था। जिसे लोग 'बमपाटी' कहते थे। इन्हीं युवकों की वजह से ही गाँव में अखबार आने लगा था, शाम को गाँव के बाहर मैदान में गेंद और कबड्डी जैसे खेल खेले जा रहे थे। इन युवकों को बडे बूढों की कठोर से कठोर बाते सुननी पडती थी। लेकिन वे हार नहीं मानते थे। गाँव का मुखिया चीनी और मिट्टी का तेल कंट्रोल रेट पर और कम ही लोगों को देता था। और अपने मकान के सामने उसने बीस गज लंबी बाँस गाड रखी थी। जिसके छोर पर तिरंगा फहरा रहा था। कपडे की परमिट में भी लाइसेन्सदार मारवाड़ी से साँठ-गाँठ करके मुखिया काफी कमा चुका था। 'बम पार्टी' वालों ने डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के पास दरखास्त कर दी। इसी तरह धिरे धिरे इन नौजवानों की गाँव में धाक जम गई। खेल, कुद, मनोरंजन, मामूली बात विचार और छोकरों की आपसी शिकायतें सुलझाना आदि काम नौजवान करते थे। इसीलिए कई गरीब लोग बडों की आँख बचाकर इन नौजवानों से बात विचार करने लगे थे। इनकी बैठक गाँव के बाहर किसी बाग में या किसी बरगद या पीपर के तले होती है।

ग्राम व्यवस्था में परिवर्तन :-

गाँव में धीरे-धीरे प्रगति हो रही है। नया हायस्कूल, अपर प्रायमरी स्कूल, संस्कृत पाठशाला भी खुली। पढे लिखे लोग शहरों में नौकरी करते थे। सबके पास दो-दो चार-चार बीघा जमीन थी। गाँव के बडे बाबु सरकारी नौकरी और ससुरालवालों की मेहरबानी से तरक्की कर बैठे थे। और इनका गाँव के लोगों से कोई संबंध नहीं था। कई लडके स्कूलों में पढ़ते थे, परिवार में हात बाटते थे। आगे की पढाई के लिए, दरभंगा या मधुबनी के कॉलेज में जाते थे। इसी तरह गाँव में नौजववानों की प्रगति हो रही थी।

गाँव में नई पीढी है जो प्रगतिशील समाजवादी एवं संघर्षशील बनती जा रही है। यहाँ पंडित के खिलाफ नौजवानोंने जो संघर्ष किया है इसका चित्रण आया है। खोखा पंडित का चतुर्भुज से नाता था। चतुर्भुज कम उम्र में ही मर गया था। चतुर्भुज जिंदा था तब तक उसने अपनी जमीन किसी के हाथ नहीं लगने दी। चतुर्भुज का बडा लडका माहे हिंदी मिडल और संस्कृत प्रथम पास करके आया

था। पंडित ने माहे के पिछवाडे एक गहरा गढ़ा खुदवाया और उसके माँ के साथ झगडा किया। माहे ने इस बारे में अपना दोस्त दिगंबर मल्लिक से मदत लेली। दिगंबर ने इस बारे में मुखिया से शिकायत की लेकिन मुखिया से कोई काम नहीं हुआ। मल्लिक और दुसरे नौजवान चूप नहीं बैठे उन्होंने माहे का केस थाने में दर्ज किया और कम्युनिस्ट लिडर तेजनारायण झा उनसे मिलके आ गये। और हाइस्कूल और स्कूल मास्टरों को भी समस्या बताई। लेकिन समस्या का हल नहीं हुआ तब दसवी कक्षा में पढ़ने वाले युवक बुलों ने एक फक्कड पद लिखा जिसमें पंडित पर व्यंग्य कसा था। मल्लिक की आज्ञा से बूलो ने अपनी रचना पढ़कर सुनाई -

''खोखा पंडित बडे सयाने
दच्छिन - पश्चिम गये कमाने
बेटा रोया बेटी रायी
करमन इसे न छूटा कोई
चुहा मारो करो पराश्चित
पाप हरेगें खोखा पंडित''[37]

यह पद सुनकर सब लोग हसने लगे। पंडित चिढ गये और बाहर गाँव चले गये। पंडिताइन ने बेइज्जती ना हो इसीलिए गड्ढा भरवा दिया। इसी तरह गाँव के नौजवान, इकठ्ठा आके समस्या का निवारण करते थे। गाँव में कम्युनिस्ट लिडर, मास्टर किसी भी समस्या का हल निकालने के बजाय उस पर दुर्लक्ष करते थे। और थाने में भी शिकायत करके कोई फायदा नहीं होता था। इससे गाँव में भ्रष्ट व्यवस्था का दर्शन होता है।

मिथिला जनपद बिहार प्रांत का पिछडा क्षेत्र है। वहाँ 'सौराठ की सभा' में मैथिल ब्राह्मणों के विवाह तय होते थे। घटक और पंजीकार अपनी स्वार्थ सिद्धि के अनुसार जमकर भ्रष्टाचार करते थे। और अनमेल विवाह किया करते थे। खोखा पंडित की नतनी बिसेसरी की शादी घुटकराज ने पचास रुपये पंडित के यहाँ से और दुल्हे की ओर से एक दश टक नोट लेकर तय करते है। पंडित के कहने

पर दुल्हे की सब जानकारी घटक ही जमा करते है, इसलिए उसे दोनों ही तरफ से पैसे मिलते थे। ''पंडित ने घटकराज को तीन रोज से उस बूढे वर की आँतडियाँ उधेडने में लगा था और नि:संदेह इस साधना में साधक प्रवर पाठक प्रवर श्री. महाराज को अनुपम सफलता प्राप्त हुई थी।''[21] घटकराज पंजीकार थोडे से पैसों के लिए किशोरी बालिकाओं के जीवन से अनमेल विवाह कराकर खिलवाड करते है। इसीतरह इनके स्वार्थी प्रवृत्ति का चित्रण हमे देखने को मिलता है।

गाँवों में शादी-ब्याह के मामले में लडका और लडकी के पसंद और नापसंद का फैसला बडे बुजुर्ग ही करते है। उन्हें दुल्हा और दुल्हन के पसंद से कोई मतलब नहीं होता। वे अपने कुलीनता के आग्रह का लाभ उठाकर और थोडे से पैसों के लिए नारियों की जिंदगी बरबाद करते है। इसीतरह अनमेल विवाह भारतीय समाज की परंपरागत समस्या बन गयी है। खोखा पंडित ने अपनी नतनी बिसेसरी का विवाह साठ साल के बूढ़े आदमी से तय किया है लेकिन उसने बिसेसरी से इस बारे में पूछा तक नहीं था। उसकी राय भी नहीं ली थी।

खोखा पंडित की लडकी रामेसरी को अपने बेटी का यह ब्याह बिल्कुल पसंद नहीं था। रामेसरी अपनी बेटी बिसेसरी को आँखों से ओझल नहीं होने देती थी। उसने अपनी बेटी को लाड-प्यार से पाला था, उसे अच्छे संस्कार किये थे। वह चाहती थी कि गाँव के नौजवान यह विवाह किसी भी तरह रोक दे। इसीतरह रामेसरी ने विधवा होकर भी अपनी बेटी पर अच्छे शील संस्कार करके उसे लाड प्यार में पाला था। यहाँ माँ-बेटी के प्यार का चित्रण भी मिलता है। रामेसरी विधवा होने से अपने पिता के यहाँ रहने से वह अपनी बेटी के ब्याह के मामले में कूछ नहीं कर सकती थी, इसका चित्रण यहाँ मिलता है। ''बडी उमरतक निपुती रहनेवाली स्त्री जिस निष्ठा से नोह-छोह से तुलसी के पौधे को पोसती है उसी तरह रामेसरी ने बिसेसरी को पोसा था।''[38] यही कथन इसका प्रमाण है।

गाँव में कुछ लोग जैसे मुखिया, फफ्तुरी ठाकुर आदि लोग होते है जिन्हें अनमेल ब्याह से कोई मतलब नहीं होता। वह गाँव के मुख्य लोग होते हुअे भी अनमेल ब्याह रोकने के बजाय उसे बढावा देते है। हँसी मजाक में चर्चा करते है। गाँवों की औरते भी इस अनमेल ब्याह की हँसी मजाक में

चर्चा करती है। जो एक स्त्री होकर भी ऐसे ब्याह रोकने के बजाय आपस में चर्चा करके व्यंग्य करती है। बिसेसरी के शादी पर हँसी मजाक किस तरह गाँव की औरते करती है इसका चित्रण किया है। गाँव की औरते कहती है -

- ''सुना है तुमने ?
- क्या कुछ बतायेगी भी कि ऐसी ही ?
- खोखा पंडित की नतनी का ब्याह हो रहा है।
- कहा का लडका है ?
- लडका ! हि : हि : हि : हि : ---- लडका !!''[39]

इसी तरह गाँव में लोग इकठ्ठा आकर कोई समस्या नहीं सुलझा सकते थे। बस उसी पर टिका टिप्पणी करते थे। नारियों पर होने वाले अत्याचार का उनपर कोई असर नहीं पडता था। ग्रामवासियों की मानसिकता के यहाँ दर्शन होते है। यदि सामुहिकता के साथ समाज हित में कोई निर्णय किया जाता तो ठिक होता।

गाँव में शादी-ब्याह की समस्या के साथ-साथ राजकीय और समसामाईक समस्या का चित्रण उपन्यास में मिलता है। पंडित, मुखिया, दुल्हा ठाकुर आदि लोग पाकिस्तान, और काश्मिर का प्रश्न, काँग्रेस शासन, भ्रष्टाचार आदि के बारे में चर्चा करते है। ''चर्चा चली की पाकिस्तान जोर मार रहा है, कश्मीर में फिर घमासान मचेगा --- बात का छोर काँग्रेसी शासन से छूट गया, तो खोखा पंडित बीच में टप-से बोले - अंग्रेज बहादुर ही अच्छे ! इनसे तो हम भर पाये --- बिना राजा के कहीं कोई राज चला है ?''[40] गाँव में भी कपडे के मामले में भ्रष्टाचार होता था और अफसर लोग पैसे खाते थे, दुकानदार ही उन्हे रिश्वत देते थे। इसीतरह गाँव में भ्रष्ट शासन और भ्रष्ट अधिकारी का परिचय यहाँ मिलता है।

विवाह संस्कार :-

गाँव में बिसेसरी की शादी की तैयारी हो गयी थी। बिसेसरी इस शादी के लिए राजी नहीं थी। बिसेसरी घबरा गयी थी। शादी के दिन दुल्हा घोडे पर आ गया था। बैठक में कई तख्तपोशोंपर

कम्बल और जाजिम बिछे थे। घरवाले और गाँववाले भी शादी में आये थे। शादी के दिन पहले बिसेसरी को महूआ का पेड की पुजा करने के लिए सुहागनी स्त्रिया ले गयी। दुल्हा बहौत सजधजकर आया था, लेकिन उसकी उम्र छिप नहीं रही थी। शादी में दुल्हा और दुल्हन के लिए खाने का इंतजाम हो चुका था। घर की सभी औरते नाखुश थी। किसी को भी यह दुल्हा पसंद नहीं था। बिसेसरी तो यह चाहती थी कि किसी तरह यह शादी रुक जाय। उसकी सभी आशा और इच्छाओं पर पानी फेरनेवाला था। यहाँ स्पष्ट है कि लडकीयों को अपनी शादी के बारे में फैसला करने का अधिकार नहीं था। बडे बुढों का फैसला ही सबकुछ था। नारी विवशता के यहाँ दर्शन होते है। अनमेल विवाह नारी के लिए एक समस्या रही है। जब तक नारी इसका विरोध नहीं करती तब तक बिसेसरी जैसी कई युवतियों का जीवन की कहानी करुणगाथा बनेगी।

ग्रामजीवन में चेतना :-

गाँवों में नई विचारधाराओं का निर्माण हो रहा है। युवा अपने अधिकारों के साथ ही समाज सुधार की दृष्टी से कार्य कर रहा है। अन्याय, रुढी, परंपरा का विरोध कर रहा है। प्रस्तुत उपन्यास में बिसेसरी का अनमेल विवाह रोकने का कार्य युवा संगठन करता है। नौजवानों के गुट ने यह शादी रुकवाने का सफल प्रयत्न किया है। शादी के दिन ही माहे ने आकर पंडित को समझा दिया था, लेकिन पंडित ने माहे की एक नहीं सुनी। नौजवान इकठ्ठा हो रहे थे। इसमें पंडित का लडका टुनाई भी शामील था। वह मैट्रिक में पढता था। अपने पिता का बर्ताव उसे पसंद नहीं था। टुनाई ने शादी रुकवाने के लिए नौजवानों की मदद की। माहे के कहने पर उसने सबको झूठ ही बता दिया कि बिसेसरी को दस्त हो गया है , ताकि किसी तरह शादी रुक जाय। लेकिन पंडित ने किसी की नहीं सुनी। शादी रुकवाने के लिए दिगंबर ने लडकों की मदद ले ली। और सारी बाते लडकों को पहले से ही बता दी थी। नौजवानों ने दुल्हे को वहाँ से भगा दिया। ज्यादा शोर शराबा न हो और अपनी बेइज्जती न हो इसीलिए दुल्हा चुपचाप घोडे पे सिधा दरभंगा भाग गया। लेकिन पंडित चूप नहीं बैठा था, दुल्हा और उसका षडयंत्र शुरु ही था। परंतु उनकी कुछ न चली। इसी तरह नौजवान लडकों ने इकठ्ठा होकर विवाह के विरोध में

जुलूस निकलवाकर शादी रुकवा दी और बिसेसरी का अनमेल ब्याह रुकवाने में सफलता प्राप्त की। गाँवों में युवा पीढी के लोगों में नयी चेतना प्रस्फुटित हो रही है और वे अन्याय का प्रतिकार करने के लिए तैयार होते है। बद्रीप्रसाद के मतानुसार - "वस्तुत: गाँव के जडता भरे सामाजिक वातावरण को चुनौती देकर इस प्रकार का क्रांतिकारी कदम उठाया जाना नई पौध की नई दिशा का परिचायक है।"[41]

प्राकृतिक सौंदर्य :-

गाँव में किसानों की खेती अच्छी थी। बरसात समय-समय पर हिसाब से आयी थी। तीज-त्यौहार आके चले गये थे। यहाँ प्राकृतिक सुष्मा का वर्णन आया है। सावन बीतते न बीतते लोग अपने-अपने खेत आबाद कर चुके थे। धान के हरे हरे पौधों से एक-एक मैदान, एक-एक पाँतर हरियाली का समुद्र हो रहा था। बयार सिहकती तो इस समुद्र का हरित-नील-लोल लहरियाँ सातो सागर की तरंगित सुषमा को मात कर जाती; खेती में धान के लहराते पौधे, देख-देख कर भविष्य की सुनहरी जालियाँ बुनने में उनकी आत्मा विभोर हो जाती। शस्यश्यामल प्रकृति देखकर मन प्रसन्न हो जाता है। रामेसरी और बिसेसरी ने घर के पिछवाडे की तरफ खाली जमीन पर पौधे लगाये थे वो उग आये थे। इसका सजीव चित्रण यहाँ आया है।

धर्म का रुप :-

भारतीय ग्रामों के सामाजिक जीवन में धर्म का विशिष्ट स्थान रहा है। लेकिन परिस्थितियों की जटिलता के कारण बुद्धिपक्ष या दार्शनिक आधार खिसकता गया और भाव पक्ष प्रबल होता गया। समाज में धर्म के ठेकेदार ब्राह्मण एवं पुरोहित वर्ग धर्म के नाम पर अनेक प्रकार की भ्रष्टताओं को जन्म देते है। धर्म के नाम पर स्वार्थ सिद्धि के लिए सामाजिक वैषम्य को बनाये रख कर धार्मिक विकृतियों का पोषण करते है। खोखा पंडित का खानदान धर्मभीरु और पूजा-पाठ परायण विद्वान ब्राह्मणों का खानदान था। यह कुल कभी शक्ति का तो कभी पंचदेवता का उपासक था। भगवती उग्रतारा इनकी कुलदेवता थी। मंदार पहाड पर पंडित नौ दिन चलनेवाले भागवत पर बैठ गये थे। दुर्गा पुजा, सप्तशती चंडी का सम्पुट और कातिक में कातिक महात्म्य आदि सब पुजा कर रहे थे।

गाँवों में ज्यादातर लोगों का गुजारा खेती पर ही चलता है। पंडित का लडका टुनाई खेती का भार संभाल रहा था। माहे की भी खेती थी। उसकी खेती में आलू और तंबाकू की उपज अच्छी थी। उन फसलों से दो ढाई सौ का सालाना आमदनी माहे की भी थी। यहाँ खेती में साग-सब्जी, निलह तीमन-तरकारी, झिडनी (तरोई) रस (झिङ्नी, भिंडी) बैंगन, मूली, कोबी, करेला, सूरन, आलू, हरी मिर्च। यह सब फसले गाँव के लोग करते थे उसीपर ही उनका गुजारा चलता था। यह स्पष्ट होता है।

खोखा पंडित का बडा लडका गिरिजानंद हाइस्कुल में संस्कृत पढता था। मंझला लडका दुर्गानंद वकिल का मोहर्रिर था, तिसरा लडका श्रीनंदन होमियोपैथी करना चाहता था और चौथा टुनाई जो मैट्रिक में था। इतना पढ लिखकर भी बिसेसरी के अनमेल विवाह में ये कुछ नहीं कर पाए। इसका चित्रण यहाँ मिलता है। पंडित का दुसरा लडका दुर्गानंद अपने सहपाठी के साथ मधुबनी चला गया था। वह जानता था कि चतुरा चौधरी भीतर-ही-भीतर बेहद खीझ गया है। और बिसेसरी का ब्याह किसी और दुल्हे से न हो उसकी कोशिश रहेगी। इसीलिए वह बिसेसरी को लेकर चिंतित था। दुर्गानंद बिसेसरी के लिए लडका ढुँढ रहा था। अगले अगहन तक वह उसकी शादी कर देना चाहता था। वह जानता था कि ये काम अपने पिता और भाईयों से नहीं होगा।

दिगंबर मल्लिक का ननिहाल पद्मपुरा खजउली स्टेशन से कोसभर पश्चिम में था। वहाँ उसे अपनी नानी और नाना को मिलनें के लिए जाना पडता था। दिगंबर के ननिहाल के लोग भक्तिभावना, पुजा अर्चा, इश्वरसाधना करने वाले लोग है। पद्मपुरा के पास मढिया नामक गाँव था। मिडल स्कूल के लिए आस-पास के इलाकों में यह बस्ती बहौत नामी थी। दिगंबर यहाँ का विद्यार्थी रहा है। वहाँ उसके बहोत दोस्त है। वाचस्पति नाम का एक मित्र दिगंबर का था। उन दोनों का वर्षों तक पत्रव्यवहार चला था। वाचस्पति की मैट्रिक के बाद पढाई बंद हो गयी। वह सोशालिस्ट बन गया था। वह छ: सात वर्षों में नौ बार जेल जाकर आ गया था। उसे माँ और एक छोटी बहन थी। बहन की शादी के बाद उसकी माँ वाचस्पिति की शादी करना चाहती थी लेकिन वाचस्पति शादी के लिए तैयार नहीं था। वाचस्पति और दिगंबर की भेट होने के बाद दिगंबर बिसेसरीवाली घटना बताकर बिसेसरी से

शादी करने के लिए राजी करता है। दिगंबर बताता है कि, ''बिसेसरी बडी समझदार और बहादुर लडकी है। बोझा बनकर तुम्हारी गर्दन नहीं तोडेगी, वहा साथ रखोंगे और माकूल ट्रेनिंग दोगे तो अच्छी साथिन बनेगी।''[42] यहाँ पर अच्छी दोस्ती का प्रमाण मिलता है।

दुर्गानंद और दिगंबर की भेट स्टेशनपर हो जाती है। दिगंबर वाचस्पति और बिसेसरी के शादी के बारे में दुर्गानंद को बताता है। लेकिन शादी के लिए बिसेसरी और वाचस्पति का गोत्र देखना, अनुवंशिकता, परंपरा आदि यहाँ आये है। ''दिगो गोत्र तो बिल्कुल ठिक है। हमारी बहन का गोत्र काश्यप पडता है --- इतना तो मुझे भी मालूम है कि वत्स और काश्यप गोत्रों में ब्याह होता है।''[43] यहाँ गोत्र देखना आदि बाते अंधविश्वास का प्रमाण है। विवाह मन की व्यवस्था न होकर धर्मप्रधान व्यवस्था प्रधान बनने से कई समस्याएँ पैदा हो गयी है। इसके यहाँ दर्शन होते है।

वाचस्पति की उम्र इक्किस-बाईस साल की थी और बिसेसरी की पंद्रह साल की। दोनों के उम्र में ज्यादा अंतर नहीं था। इसीलिए शादी में कोइ उम्र की समस्या नहीं थी। शादी कम खर्च से और बिना आडंबर के और निहायत सादगी से होगी यह भी तय हो गया था। दुर्गापूजा की छुट्टी में दुर्गानंद घर आकर बिसेसरी के शादी के बारे में सबको बताता है। सिर्फ पंडित को नहीं बताता। घर के सभी लोग खुश हो जाते है। दिगंबर और दुर्गानंद की कडी हिदायत थी कि शादी हो जाने तक गाँव में किसी को यह बात मालूम नहीं होनी चाहिए। शादी के पहले ही दिन दिगंबर वाचस्पति को अपने घर लेके आनेवाला था। फल फलहारी, पान-मिठाई इस सामग्री की जिम्मेदारी टुनाई लेनेवाला था। पुरोहित का काम पंडित के बडे लडके ने ले रखा था। गाँव के गिने चुने लोगों को ही शादी पर बुलाना था। बिसेसरी को तैयार रखने की जिम्मेदारी रामेसरी पर थी। और शादी रात के वक्त ही होगी आदि बाते, तय हो गयी थी। गाँव में कुछ ऐसे भी लोग थे जो शादी में विघ्न डालने के बारे में सोचते थे। मुखिया यह बात पंडित को बताकर शादी रुकवाने वाला था, लेकिन वह अपनी बेटी कांता की वजह से भावुक होकर पंडित को कुछ नहीं बताता। उसका विचार बदल जाता है और वह नौजवानों के प्रति अधिक से अधिक संवेदनशील होता है। ब्याह की सभी विधियाँ सरलता से पुरी हो जाती है, गाँव के बडे बूढों ने वर-वधु को आशिश

दिया और वाचस्पति और बिसेसरी का विवाह सादगी से संपन्न हो गया। इसमें पंडित का कुछ नहीं चला। सब नौजवानों ने मिलकर ब्याह संपन्न किया। नौजवानों का नया नेतृत्व और पुरानी प्रथा का विरोध, सडी गली प्रथा, स्वार्थवृत्ति, पुरानी रीति और शोषक वृत्ति का विरोध इससे धीरे-धीरे प्रगति का प्रमाण मिलता है। और नई पौध के नये लडकों में नये विचारों की स्थापना देखने को मिलती है।

''नागार्जुन ने अपनी औपन्यासिक कृतियों मे युवा पीढी और पुरानी पीढी के बीच संघर्ष दिखाकर युवा पीढी की पुरानी पीढी पर विजय दिखायी है, जो उपन्यासकार के प्रगतिशील होने का परिचय देती है।''[44]

अंधश्रद्धा :-

नागार्जुन ने अपने उपन्यास में ग्रामजीवन में स्थित धार्मिक पाखंड एवं अंधविश्वास, मनोतियाँ, रुढी परंपरा आदि का यथार्थ चित्रण किया है। आसिन के महिने में पितरपच्छ के दिन और मातृनवमी होने से माँ, नानी, सास, दादी और परदादी के निमित्त एक ब्राह्मण को भोजन दिया जाता था। इसमें ब्राह्मण और बटुकों कैसे सामान्य लोगों को ठगाते है इसका चित्रण मिलता है। मनौतियाँ और धार्मिक भावनाओं के दर्शन भी यहाँ मिलते है। बिसेसरी की शादी बूढे के साथ टूट जाने के बाद दुसरे लडके साथ होने के लिए टुनाई और समुचा परिवार यहाँ मनोतियाँ मनाता है - ''टुनाई का समुचा परिवार हाथ जोडकर भगवान से मनौतियाँ मनाया करता था कि चाहे जैसे भी हो बिसेसरी का ब्याह अगहन के लगन में अवश्य हो जाये, पंडिताइन ने आंचल पसारकर और मत्था टेककर जोडा छागर (तरुण बकरा) कबूल था दुर्गा माई के आगे।''[45] बिसेसरी की मनौती यही थी कि, ''आने वाले अगहन में अगर कोई बीस या बाईस साल का दुल्हा उसके लिए मिल गया और शादी हो गयी तो वह चाँदी की छोटीसी खुबसुरत बसुली (बाँसुरी) गढ़वायेगी, सुनार से और बाँके बिहारी कुँवर कन्हैया के हाथों में थमा देगी।''[46]

इसी तरह भारतीय ग्रामों में धर्म का काफी प्रभाव है, साथ ही अंधविश्वास ग्रामवासियों का अभिन्न अंग बन चुका है। और देवी-देवताओं की पुजा, मनौतियाँ आदि के कारण लोगों को कितना पंगु बना दिया है। इसका चित्रण नागार्जुन के 'नई पौध' उपन्यास में वर्णित हुआ है।

चेतना जागृती :-

'नई पौध' में गाँव के बडे बूढों की जिद तोडकर नौजवानों ने एक लडकी के जीवन को बरबाद होने बचा लिया। अनमेल विवाह की यह समस्या हमारे ग्रामीण समाज में आज भी देखने को मिलती है। इस समस्या का समाधान सिर्फ नई पीढी ही कर सकती है। नई पीढी ही सब रुढी, परंपरा, अंधविश्वास तोडकर समाज का रुप बदल सकती है। सामाजिक ही नहीं तो राजकिय समस्या भी नौजवान सुलझा सकते है, इसका चित्रण आया है।

नागार्जुन का यह उपन्यास लघु होने पर भी प्रभाव के लिहाज से बडा ही व्यापक साबित हुआ है। पात्रों की मौलिकता, रोचकता, घटनाओं का मोहक ताना-बाना, भाषा में स्वाभाविकता पात्रानुकूलता, संवाद छोटे-छोटे और सरल है। और आँचलिक भाषा का प्रयोग मिलता है। मतसुन्न (मतिशुन्य), बापूत (बाप और पूत), उह (समझ), ढहलेलवा (महाबुद्‌ध), प्रत्यवाय (बहुत बडा कुकर्म), खुरापत (उपद्रव), छोटकिन (छोटी लहुरी), नेडी (घटिया), मुला (मुदा, लेकिन), बुधियार (होशियार), टाडा (तेल रखने का बर्तन (मिट्टी का)), लिलसा (लालसा, चाह), छुंछी (स्टेथस्कोप), मउगी (औरत), सतिया, सौतेली, आदि।

नागार्जुन ने अनमेल विवाह इस सामाजिक समस्या पर प्रकाश डाला है। उपन्यास की कहानी नई पृष्ठभूमी पर आधारित है। मैथिली जनजीवन प्रभावी ढंग से चित्रित हुआ है। यह कहा जाता है - ''इसमें न भद्‌दापन है न ही किसी राजनीतिक का सैद्‌धांतिक विचारों का अन्ध मोह है। कवि लेखक कलाकार का जिस प्रकार शुद्‌ध संकिर्णताओं से उपर उठकर जीवन में मुक्त हृदय होकर प्रवेश करके उसकी रसानुभूति करनी चाहिए, वैसी दृष्टि नागार्जुन की इस उपन्यास में है।''[47]

रामदशरथ मिश्र के शब्दों में - ''इस उपन्यास में एक सडी गली प्रथा, स्वार्थ वृत्ति और पुरानी पीढी के शोषक वासना का व्यंग चित्र उद्‌घाटित करते हुए लेखक नयी चेतना की संभावनाओं की ओर संकेत करता है।''[48]

नागार्जुन ने देश की नयी पौध के रुप में नवयुवकों की शक्ति को पहचाना है। लडके लडकी के अभिभावक विवाह में शामिल होते है यह एक अनोखी घटना है। तथा अनमेल विवाह का विरोध करना, नवयुवकों का 'बमपाटी' नामक संघटन बनाना आदि नई समाजव्यवस्था निर्माण में महत्त्वपूर्ण सोपान लगता है।

निष्कर्ष :-

उपन्यास की कहानी पुरानी रही है, परंतु नये पात्र, नई भूमिका के सभी चिजों का अपूर्व मिश्रण है। प्रगतिशील युवकों का विजय होना नये मानवीय मूल्यों की स्थापना का प्रमाण है। वस्तुत: गाँव के जडता भरे सामाजिक वातावरण को चुनौती देकर इस प्रकार का क्रांतिकारी कदम उठाया जाना 'नई पौध' की नयी दिशा का परिचायक है। 'नई पौध' में क्रांति के बीज, नयी विचारधारा प्रस्थापित हो रही है। इसी कारण यह पीढी प्रगतिशील समाजवादी एवं संघर्षशील बनती जा रही है। नवीन मूल्यों की स्थापना करने का प्रयास नागार्जुन ने किया है।

नागार्जुन के मतानुसार देश का भविष्य, समाज का स्वास्थ्य एवं विकास युवाओं के हाथ में ही है। नव युवा संघटित होकर कुप्रथाओं का विरोध करेंगे तो समाज में नैतिक मूल्यों की स्थापना होगी। नारी का शोषण नहीं होगा। आजादी के पश्चात परिवर्तित ग्रामजीवन में युवा संगठनों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। इसका प्रमाण यह उपन्यास है। साधारण प्रसंग लेकर असाधारण बात पर प्रकाश डालने का कार्य नागार्जुन ने किया है। नागार्जुन ने बिसेसरी के विवाह को लेकर नई विचार का पौधा लगाया है, नारी मुक्ति का प्रसार किया है। उसका जब वृक्ष बनेगा तब नारी मुक्ति होगी। नारी का शोषण, रुढी, प्रथाओं, अंधविश्वास आदि के कारण नहीं होगा। नया समाज बनने के लिए नई पौध की जरुरत है यही संदेश उपन्यासकार ने दिया है। नई व्यवस्था नये मानवीय मूल्यों की दर्शक घटना है, अत: इसी दृष्टि से यह उपन्यास श्रेष्ठ रहा है।

4. बाबा बटेसरनाथ :-

नागार्जुन आँचलिक उपन्यास के जन्मदाता है। उनके आँचलिक कहे जाने वाले उपन्यासों में 'बाबा बटेसरनाथ' (1954) महत्वपूर्ण एवं श्रेष्ठ उपन्यास है। 'बाबा बटेसरनाथ' में नागार्जुन ने मिथिला जनपर के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक चित्रण के साथ, ग्रामीण जीवन, जमींदारों की शोषक वृत्ति, रीतिव्यवहार, आस्था-अनास्था, ग्रामीण मर्यादा-अमर्यादा, नैतिकता, अनैतिकता, प्राकृतिक दृश्य आदि का सफल एवं यथार्थ अंकन किया है। ''नागार्जुन का लघुकाय 'बाबा बटेसरनाथ' बडी सफलता से आँचलिक जीवन एवं संस्कृति के विकास को लक्ष्य कर, उसकी प्रतिक्रिया पर प्रकाश डालता है।''[49] नागार्जुन ने एक सौ तीन वर्ष के वटवृक्ष के मानवीकरण द्वारा इस उपन्यास में रुपडली गाँव की चार पीढीयों की कथा चित्रित की है, तथा ग्रामीण-जीवन के क्रमिक विकास का चित्रण किया है। इसके बारे में डॉ. जवाहर सिंह का कथन है - ''नागार्जुन के 'बाबा बटेसरनाथ' में भी अतीत कालिक और वर्तमान कालिक वातावरण को चित्रित किया गया है। पुराना वट वृक्ष अपने अतीत की अनुभव की कहानी सुनाते हुए देशव्यापी स्वतंत्रता आंदोलन के विकासेतिहास का उल्लेख तत्कालीन वातावरण की पुरी प्रासंगिकता के साथ तो करता ही है, साथ-ही-साथ पुरी ऐतिहासिक प्रामाणिकता के साथ सन 1906 ई. के अकाल, अंचल को तबाह करनेवाली भयंकर बाढ़ तथा उसके बाद फैली महामारी, जिल्हे अंग्रेजों के द्वारा अंचलवासियों पर किये गये विभिन्न अत्याचार तथा शोषण सन 1921 इ. में हुए देशव्यापी विरोध प्रदर्शन, नमक कानून भंग आदि का वर्णन भी तात्कालिन सामाजिक वातावरण के संदर्भ में करता है।''[50] नागार्जुन ने इस उपन्यास में एक सौ तीन वर्ष के वटवृक्ष के मानवीकरण के माध्यम से नवीन कथा शिल्प का प्रयोग किया है। एक सौ तिरेपन पृष्ठ के उपनयास में लगभग सौ पृष्ठ जैकिसुन की स्वप्न कथा के रुप में वर्णित हुई है।

'बाबा बटेसरनाथ' सन 1942 के पश्चात की घटनाएँ जैकिसुन, दयानाथ, जीवनाथ आदि की वर्तमान कथा के रुप में प्रस्तुत की गई है। इस स्वप्न कथा को दो भाग में प्रस्तुत किया गया है। किंतु इसमें उल्लेखित दिर्घ कथा पहली बार बताया हुआ स्वप्न है तो दुसरा स्वप्न बटेसरनाथ के आशिष तथा भविष्य में अपने मरण की सूचना देने से ही खत्म होता है।

रुपडली में तीन सौ परिवार है, और आबादी लगभग ढ़ाई हजार है। उनकी आजीविका का मुख्य साधन खेती ही है। इसी इलाके में दस कोस के दरम्यान ही दो शुगर फैक्टरियाँ, एक रेल्वे जंक्शन, खानदारी जमीनदारों की सतगामा और परसादीपुर जैसी दो बडी बस्तियाँ, चार कोस पर दरभंगा जैसे शहर, छ: कोस पर मधुबनी कस्बा, एक मिडल स्कूल, संस्कृत की एक पाठशाला, आधा कोस के फासले पर हाइस्कूल है। इस तरह रुपडली अपने आप में एक परिपूर्ण गाँव है।

आर्थिक स्थिति :-

गाँव में सभी जाति के लोग रहते है। इनमें ब्राह्मण, रजपूत, ग्वाले, अहीर, धानुक, मोमिन, चमार और पारसी परिवार भी है। इसमें ब्राह्मण, रजपूत की खेती है। ग्वालों और मोमिनों के भी कुछ खेत है। लेकिन साठ प्रतिशत परिवार ऐसे है, जिनका गुजारा केवल मजदूरी पर निर्भर है। ऐसे लोग कई बार गाँव के बाहर पडोस के गाँव में काम की तलाश में जाते है। गाँव के पच्चीस-पचास आदमी शहरों में कुलगिरी करके या और कोई छोटा-मोटा काम करके अपने परिवारों की जीविका चलाते हैं। गन्ने का मोसम आने पर पाँच-दस आदमी अस्थायी काम लेते हैं।

गाँव के ग्रामवासियों का पेहराव सामान्य है। यहाँ के लोग मजबूत काठी के है। उनका रहन-सहन बिलकुल सीधी-सादी है। मध्यम और उंची हैसियतवाले मिर्जई, दुपलिया टोपी, चमरौधा जुता पहनते है। जमीनदार, राजा, दीवान और राजपुरोहित - राज पंडित जैसे लोग छोटे लाट के दरबार में जाते तो चुस्त पाजामा, शेरवानी, पेचदार पगडी और दिल्लीवाले जूते पहनकर जाते है।

भारत में अंग्रेज व्यापारी आने से पहले भारतीय ग्राम समाजव्यवस्था आत्मनिर्भर थी। लोगों का मुख्य व्यवसाय खेती ही था। और घर में कुछ घरेलू काम करते थे। लोग आपस में वस्तुओं का आदान-प्रदान कर कारोबार चलाते थे अपनी जरुरत की सारी चीजें उन्हे अपने गाँव में प्राप्त होती थी। ग्राम समुदाय की मुख्य सामाजिक संस्थाएँ, परिवार, वर्ण, जाति-व्यवस्था और ग्रामपंचायत थी। परिवारों पर ग्राम समुदाय और जाति व्यवस्था का नियंत्रण था। भारत में अंग्रेजों के आने से पूर्व भारतीय समाज पूर्णत: आत्मनिर्भर था लेकिन वह अंधविश्वास, रुढि परंपरा में आबद्ध तथा अपरिवर्तनशील था।

प्रथम अंग्रेजो ने इस्ट इंडिया कंपनी स्थापन की। अंग्रेज प्रथम बेपार के उद्देश्य से भारत में आये और यहाँ के शासक बन गये। आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से उन्होंने सारे अधिकार अपने हाथ में लिये। भारतीय ग्राम में घरेलू उद्योग बंद हो गये, मुख्यत: करघे और चर्खे को उन्होंने नष्ट कर दिया, लोग दरिद्री बने, जमीनदार वर्ग किसानों का शोषण करने लगे। केवल जमीनदार ही नहीं तो अंग्रेज भी भारतीय जनता पर निरंतर अत्याचार करते थे।

अंग्रेजो ने भारतीय व्यवस्था को अपने हाथ लेकर उसमें बड़े-बड़े अधिकारों के स्थान पर अंग्रेज अधिकारी ही थे। इसका चित्रण करते हुअे उपन्यासकार ने लिखा है - "उपर बड़ा लाट और छोटा लाट, सब गोरे साहब। सूबाई दफ्तर और हाईकोर्ट कलकत्ता में थे। इन देहातों में एक तरफ तो जमीनदारों को दबदबा था, दुसरी तरफ कहीं-कहीं नील के कारखानदार अंग्रेज जम बैठे थे।"[51] बाजार का कारोबार देशी सौदागरों, तेली, सूँडी, कलबार, अगरबाला, रौनियार, बनरवाल, हलवाई के हाथों में था। जमीनदार और सूखी किसान सूद पर कर्ज देते थे। अंग्रेजों ने व्यापार की दृष्टि से रेल्वे-लाईन शुरु कर दी थी। इस तरह अंग्रेजो के सुधारणाओं में भी कुटनीति के दर्शन होते हैं। धीरे-धीरे भारत पर अंमल करने का की उनकी नीति रही है। यह लेखक ने यहाँ स्पष्ट किया है।

जमीनदारी प्रथा :-

भारतीय ग्रामों में जमीनदारी प्रथा लोगों के शोषण का प्रमुख अंग है। जमीनदारी प्रथा के कारण किसान, मजदूर वर्ग का शोषण होने लगा। गरीब किसान आजीवन कर्ज में डूबा रहता था। शत्रुमर्दनराय इन्ही जमीनदारों के अत्याचार का शिकार हो गया। शत्रुमर्दनराय के पिता ने जमीनदार से तीस रुपये सूद पर लिये थे। अपनी जिंदगी में वह कर्ज की रकम नहीं चुका सका और कर्ज की रकम चालीस रुपये हो गयी। जमीनदार ने शत्रुमर्दन को बडी बर्बरता से मार डाला। पहले तो उसपर लाल चीटें छोड गई और उपर से कोडे बरसाये। इसका वर्णन देखिए - "चीटे हजारों की तादाद में शत्रुमर्दन राय की देह पर फैल गयी। माथा हिलाकर बेचारे ने बँधे हाथों को उपर-उपर झटकने की कोशिश की, कि पीठ पर कोडे पड़े सपाक-सपाक्! चार बार!!"[52] यह घटना जमीनदारों द्वारा होने वाले अत्याचारों,

बर्बरता का उदाहरण है। जमीनदारों की विलसिता और मनोरंजन का शानदार महल गरीबों के खून व पसीने से सींचा जाता है। जमीनदारों के यहाँ विवाह, तीज-त्यौहार तथा गाने होते। इन सब के पीछे गरीब जनसाधारण का न जाने कितना खून-पसीना बहाता हैं? जमीनदार के बेटे के विवाह पर बेगार लेने का एकही उदाहरण रोंगटे खडे करने के लिए काफी है। एक बार जमीनदार के लडके के विवाह में "कंधोंपर बाँस रखकर सोलह बेगारी भारी-सी एक तख्तपोश ढोए जा रहे थे, उस पर दरी और जाजिम बिछी थी। मय साज-बाज के एक रंडी उस तख्तपोश पर नाच रही थी - तबला, डुग्गी, सारंगी, मजीरा सब साथ दे रहे थे। "---- बारात में साथ चलते बेगारों के कंधे ! कंधो पर बाँस और बाँसों पर तख्तपोश ! तख्तपोश पर एक साज-समेत एक बाईजी नाच रही हैं और राजा बेटा ब्याह करने जा रहा है।"[53] इस प्रकार बेगार रुप में जनसाधारण का शोषण होता था।

जमीनदारों का बेगार लेना जन्मसिद्ध अधिकार मानते थे। यह सौ वर्ष पूर्व की कहानी थी। लेकिन अब जमीनदारी उन्मुलन प्रारंभ होने पर जमीनदार सार्वजनिक उपयोग की भूमियों को धीरे-धीरे बेचने लगे। लोभी किसान टुनाई पाठक और जैनारायण झा ने राजा बहादुर से बरगदवाली भूमि और पोखर जबरदस्ती लेली थी। वह बरगद को कटवाना चाहता था। दरभंगा के महाराजा दरबारियों और अफसरों की सौगात स्वरुप फल भेजने की अपेक्षा बेचकर लाभ कमाने लगे। बाबा बटेसरनाथ कहते है - "जाते जाते भी ये राजा जमीनदार भू-स्वामी, सामन्त चांदी काट रहे है। घोडे की किंमत पर वे हाथी हटा रहे है, बछडे की कींमत पर घोडा और बछडा बेचा जा रहा है। इसमें स्पष्ट होता है की जमींदार कम दाम में अच्छी वस्तु खरीदते थे, एक तरह से जनता का शोषण ही हो रहा था। इस पर उपन्यासकार ने करारी चोट की है।

अंग्रेज किसानों को तीन-कठ्ठा भूमि में नील की खेती करने के लिए विवश करते थे। सलाम न करने पर जैकिसुन के दादा को हंटरों की बौछार सहनी पडी थी। लालची जमीनदार अपने फायदे के लिए एक गूँगे चमार की भी हत्या कर देते है। अत: आजादी के बाद भी जमीनदारों द्वारा होने वाला शोषण नहीं रुक सका। भ्रष्ट, लालची जमीनदार विभिन्न हथकंडे अपनाकर अपनी कार्यपूर्ति किस

तरह करते थे इसका एक उदाहरण बरगदवाली जमीन बेचना ही है। जिससे उनकी नीति स्पष्ट होती है। इस बारे में डॉ. जवाहर सिंह का कथन है - ''बाबा बटेसरनाथ की कथा किसी व्यक्ति की नहीं पूरे शोषित पीडित वर्ग की है, 'कम्युनिस्ट प्रभावित गाँव' की है, जो देश की आजादी के पूर्व शोषक अंग्रेज सत्ता के विरुद्‌ध अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत था। आजादी के बाद भी देशी शोषकों - अत्याचारियों, जमीनदारों, पूँजीपतियों, भ्रष्ट सरकारी अफसरों और जन-सेवा के बहाने अपना स्वार्थ साधने वाले शासक पार्टी के नेताओं के विरुद्‌ध संघर्ष रत हो।''[54]

प्राकृतिक आपदा :-

ग्रामों में प्राकृतिक आपदा की समस्या महत्त्वपूर्ण है। प्राकृतिक आपदा के कारण ग्रामविकास में रोडे अटकाये जाते है जिसका चित्रण प्रस्तुत उपन्यास में हुआ है। नैसर्गिक आपत्ती के कारण ग्रामजीवन तहस-नहस होता है। अकाल, बाढ जैसे नैसर्गिक विपत्तियों से विशेष रुप में किसानों का जीवन तबाह हो जाता है। लोगों का निर्वाह खेती पर चलता था। अत: जब खेती चौपट हो जाती तो लोग भूखे मर जाते। इसका वर्णन देखिए - ''मामूली हैसियत के किसान शंकरकंद बनाम अल्हुआ की शरण ले चुके थे। खेत मजदुर और जन बनिहार आम की सूखी गुठलियाँ चूर-चूरकर महुआ का जरासा आटा उसमें मिलाकर, टिक्कड बनाते और उसी से भूख की आँच को शांत करते।''[55] तालाब का पानी कम होने लगा। लोग मछली और कछुओं पर टूट पडे। परिस्थिति इतनी भयावह हो गयी कि लोग इटों का चूरण, पेड के पत्ते, छाल, आम की गुठलियाँ खाने लगे। देश का समूचा पूर्वी हिस्सा भूखमरी की चपेट में आ गया था। जिसमें हजारो परिवार बरबाद हो गये और लाखों की जान चली गई। रोने वालों के पास आँसू नहीं थे। लाशों का बहुत ही बुरा हाल था। उन्हें मैदान में फेकने लगे। ''गीधें कौओं और कुत्तों का आपसी वैर भाव इसीलिए खत्म हो गया था कि लाशों की कमी नहीं थी। मनुष्यों और पशुओं के कंकाल गाँव के बाहर इधर-उधर फैले दिखाई देने लगे ---।''[56]

अकाल के समान बाढ के अवसर पर भी लोगों की स्थिति भयावह हो गयी थी। जीबछ नदी को भयानक बाढ आने से समूचा इलाका पंद्रह दिन तक पानी में था। फसले डूब बई, मैदान समुद्र

बन गये। लोगों का जीवन बरगाद होने लगा। मामूली किसान चावल को क्या, जलावन के अभाव में खेसाड़ी और मसूर के दाने भिगो भिगोकर चबाया करते। इसी तरह बीच-बीच में भूचाल भी आता है। बरगद के पेड को इसी भूचाल ने गिरा दिया था। इसीकारण वह पेड टेढा हो गया था। बाबा बटेसरनाथ कहता है - ''वह दूर्घटना मेरी तन्दुरुस्ती को पी गई और हमेशा के लिए मुझे अपाहिज बना गई।'' प्राकृतिक आपदाओं से ग्रस्त देहाती जन-जीवन की विभिन्न झाँकियाँ उपन्यासकार ने प्रभावी ढंग से चित्रित की है। ग्राम विकास में यही बड़ी बाधाएँ बनी है। जिससे पूरा ग्राम जीवन विनाश की कगार पर खडा है। इसपर भी उपन्यासकार ने प्रकाश डाला है।

प्रथा-परंपरा :-

अशिक्षा और अज्ञान के कारण रुपडली के ग्रामजीवन में अनेक प्रथाएँ थी। इन प्रथाओं के कारण समाज जीवन खोखला बन गया था। वृक्षपुजा और वृक्षोंपर निवास करने वाले ब्रह्मबाबा की भी पूजा लोग ईश्वर पूजा के समान करते थे। सब लोग बरगद के पेड की पूजा करते है। सोमवार और बुधवार के दिन प्रात:काल स्त्रियाँ आकर बरगद की वेदी पर चावल की पीठी के घोडे खडे करती, पिण्डियों पर दूध डालती, अच्छत, फूल चढाती, परिवार की भलाई के लिए मिन्नते मांगती थी। किसी के घर कोई शुभ कार्य होता तो पाठक बाबा का पुजन अवश्य कर लेते। मनोरथ पुरा होने पर लोग आकर धुमधाम से मनौतियाँ चढाते। बारह महीनों में बीस-पच्चीस बकरे भी बलि चढाते है। प्रारंभ में लोग बरगद की पेड की छाया में आकर विश्राम करते लेकिन ब्रह्मबाबा की स्थापना होते ही बरगद के प्रति सब की भावना बदल गई और वे दूर भागने लगे। अपनी व्यथा को बटेसरनाथ कहता है - ''जब लोग मुझे स्नेह और प्यार की निगाहों से नहीं, आदर और श्रद्धा की निगाहों से देखने लगे। --- श्रद्धा, भक्ति, भय और आतंक ---- अब मैं प्रिय नहीं था, पुजनीय था, वंदनीय और माननीय था।''[57] ये सभी प्रथाएँ ग्रामवासियों की मानसिकता को दर्शाती है। जिसमें उनका अज्ञान, धार्मिकता, श्रद्धा का भाव रहा है। यहाँ स्पष्ट है जो बरगद प्रारंभ में सभी को प्रिय था लेकिन जब वह ब्रह्मा बना तो लोग डर से दूर जाने लगे। इससे यह स्पष्ट होता है, धर्म के कारण ग्रामवासियों में डर का भाव बढता ही है।

रुपडली ग्राम में रुढिग्रस्तता के साथ-साथ अनेक परंपराएँ भी प्रचलित है। परंपरा के अनुसार स्त्रियाँ अपना शरीर गुदनों से सजाती है। जैकिसुन की परदादी का समूचा बदन गुदनों से भरा था। उसकी माँ के बदन पर भी गुदने के दो-तीन निशान थे। बाबा बटेसरनाथ के शरीर पर लडके विविध चित्र बनाते, जो परंपरागत संस्कृति के प्रतीक थे। इसमें पंछी प्राणियों से लेकर मानव जीवन की अभिव्यक्ति की जाती, जिससे तत्कालीन लोग परंपरा और संस्कृति के दर्शन होते है। शरीर गोदना एक प्राचीन प्रथा है, जिसका यहाँ निर्वाह होता है ऐसा लगता है, इसमें श्रृंगार की भावना भी छिपी है।

अंध-विश्वास :-

गाँवों में औलियाँ, ओझा-गुनी, साधु-संत, ज्योतिषी, मध्दू आदि अज्ञान के कारण लोगों से फायदा उठाते है। जैकिसुन की दादी अकाल के बारे में अपने पति से कहती है, ''देखते होना? इस बार फागुन में ही कैसी मनहूसी छा गई हैं। रात को काला कौआ चीखता रहता है, कई कई दिन के समय गीदड हुआँ-हुआँ करता है ---- अब के भरी अकाल पडेगा, देख लेना।''[58] यह कथन अंधविश्वास का प्रमाण है। अंधविश्वास रुढी परंपरा के साथ शकुन-अपशकुन का संबंध भविष्यत की घटना से जोडने की एक मानसिकता यहाँ बनी है ऐसा भी दिखाई देता है, जो अज्ञान का प्रतीक है। भविष्य पर पूछना, विवाह के लिए बलि चढाना आदि के पीछे अप्रगत दृष्टिकोण ही रहा है।

धार्मिक स्थिति :-

भारतीय समाज जीवन में धर्म का विशिष्ट स्थान रहा है। इस उपन्यास में धार्मिक मान्यताओं की जडे लोगों में बहुत गहरी दिखाई देती है। धर्म के नामपर देवी देवताओं की पूजा का यथार्थ चित्रण किया है। नागार्जुन ने उपन्यास में समाज में प्रचलित वृक्षपूजा, उस पर निवास करने वाले देवता तथा ब्रह्म आदि का वर्णन है। साधारण की अंधभक्ति से वटवृक्ष द्वारा परतंत्रता का अनुभव कराकर धार्मिक पाखंडों एवं अंधविश्वासों में अपनी अनास्था व्यक्त की है। बारिश न होने पर देवी देवताओं की उपासना, बरगद पेड के नीचे रुपडली के ब्राह्मण मिट्टी के ग्यारह लाख शिवलिंग बनाना और सामूहिक रुप से पुजा करना धार्मिकता ही है। फिर भी कोई फायदा नहीं होता। यहाँ की औरते

बारिश होने के लिए रात में मेंढक पकड लाती है और उन्हें मुसलों में कूचल डालती है। उपन्यासकार ने लिखा है ''ग्वाले, अहीर, धानुक, भुइयाँ महाराज का पूजन किया, दस भेडे बलि चढाई और दो जवान खेलते-खेलते लहु-लुहान हो गये। फिर राजा इंद्र खुश नहीं हुआ पंडितों ने महिनो तक चंडी पाठ किये, साधकों ने एक-एक मंत्र को लाखों जपा लेकिन अंत तक बारिश नहीं हुई।''[59] यहाँ स्पष्ट धार्मिक श्रध्दा के मूल में अंधाविश्वास ही रहे है।

अंधश्रद्धा के कारण लोग बीमारी में सरकारी अस्पताल में जाकर दवा भी नहीं लेते थे। लहेरियासराय में सरकार की ओर से एक अस्पताल खोला गया था, परंतु पंडितों के कारण दवा लेने के लिए कोई भी तैयार नहीं था। क्योंकि पंडित पुरोहित अपना लाभ उठाना चाहते थे। उनका प्रचार था कि --- शहरों के अंदर ये जो अस्पताल खुल रहे हैं वे हिंदुओं को भ्रष्ट करने के खस्टानी कारखाने है --- गोमांस का अर्क, सुअर का लहू, विष्ठा का सत, आदमी की खोपडी का गुदा से विलायत में दवाएँ तैयार होकर आती हैं --- जोर की अफवाहे फैली हुई थी। डाक्टरी दवाओं के खिलाफ।'' ये अंधविश्वासी लोग अपनी इच्छापूर्ति के लिए पशु बलि देते, बाराह महीनों में बीस-पच्चीस बलि चढाते थे। पंडित यजमान से पहले तो बकरे की पूजा करवाता, फिर हथियार की। पीछे पंडित के अनुसार यजमान दोनों हाथ जोडकर बकरे से कहता -

''यज्ञ के निमित्त पशुओं की सृष्टि की विधाता ने
यज्ञ के निमित्त ही उन्हें मार गिराया जाता है
इसीकारण मैं तुम्हे मरवाउँगा
यज्ञ की हिंसा हिंसा नहीं हुआ करती --- ।''[60]

यहाँ स्पष्ट है यज्ञ जैसे धार्मिक संस्कार पर होने वाली बलि को वे हिंसा न मानकर भगवान की कृपा मानते है। धर्म के बारे में देवेश ठाकुर का कथन है - ''धर्म चाहे किसी भी जाति और देश का हो, मूलत: मानवीयता के उदात्त आदर्शों का प्रवक्ता होता है, लेकिन जब धर्म कुछ निढल्ले, स्वार्थी और हिन प्रवृत्तिवाले व्यक्तियोंद्वारा एक व्यवसाय के रूप में अपना लिया जाता है, तब उसकी

उदात्त भावना का, तिरोहरण हो जाता है और उसकी आड़ में अनेक विसंगतियाँ पनपने लगती है। भारतीय समाज में बहुत से धर्म का इसी प्रकार व्यवसाय होता आया है।"[61]

ग्रामीण समाज में तीर्थाटन पद्धति भी प्रचलित थी। याता-यात के साधन नहीं थे फिर भी गाँव के देश-बारह लोगजोर बाँधकर तीर्थाटन के लिए जाते थे। परदादा राऊत चैत में वारुणी के परब में लोगों के साथ पैदल गये। बाबूसाहब देवीदत्त सिंह ने चारों धाम की यात्रा की तो रहलुआ के तौर पर जानू राउत उनके साथ गया था। परदादा राउत ने बरगद के पौधे को लगाते समय पुत्र-जन्म-सा उत्सव मनाया था। सौ साल पूर्व यहाँ याता-यात के साधन न होने के कारण लोग यातायात के लिए हाथी, घोडा, बैलगाडी, पालकी-तामदान, इक्का और खटोला आदि की मदद लेते थे। तीर्थटन में, उत्सव में सामूहिकता दिखाई देती है, जो आज भी ग्रामजीवन की विशेषता बनी रही है।

नारी जीवन :-

'बाबा बटेसरनाथ' में नारी जीवन सामान्य दिखाई देता है क्योंकि नारी पात्रों की अपेक्षा पुरुष पात्रों की अधिक भरमार हुई है। नारी पात्र के रुप में पर दादी, दादी तथा जैकिसुन की माँ का नाममात्र उल्लेख आया है। परदादी और दादी के काल की एक घटना से शोषिक नारी जीवन स्पष्ट होता है। परदादी के समय में एक बडे घर की लडकी, जो बाल विधवा बन चुकी थी वह एक चारवाहे से प्यार करती थी। उसने अपना तन-मन उसपर निछावर कर दिया था। लेकिन यह बात लडकी के घरवालों को मालूम हुई तब वे चरवाहे का कत्ल कर देते हैं। दुसरे दिन वह लडकी तालाब में खुदखुशी कर देती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि वहाँ जाति के बंधन कडे थे और विधवा का पुनर्विवाह करना पाप समझा जाता था। नारी विवाह के मामले में स्वातंत्र्य नहीं था, तो विधवा का जीवन मृत्यू से भी बदत्तर था। उसे खुदखुशी करने के लिए विवश होना पडता था। यह नारी स्थिति का एक अच्छा उदाहरण है।

शिक्षा व्यवस्था :-

स्वतंत्रता के बाद शिक्षा के प्रति जागरुकता निर्माण हो गई है। लोग धीरे-धीरे शिक्षा का महत्त्व समझने लगे है। गाँव में पाठशाला भी है, लेकिन उच्च शिक्षा तक बडे बाबुओं के ही लडके

पहुँचते है। मध्यम और सामान्य वर्ग के लोग सिर्फ पढ़ना-लिखना तक जानते है। यहाँ ऊँची डिग्री पानेवाले भी कुछ कम नहीं, लेकिन यह डिग्री केवल वह अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए ही इस्तेमाल करते है। वे सभी जमीनदारों के बेटे है। टुनाई पाठक का लडका एम.ए. और वकालत का इम्तिहान पास करके ससुर जज की सिफारिश से इन्कमटैक्स का जिला अधिकारी हो गया था। जैनारायण का बेटा लोको इंजिनिअरिंग की उँची डिग्री पाकर जमालपूर के रेल्वे वर्कशॉप में चार सौ की तनख्वाह पर लग चुका था। गाँव में दो वकील, दो प्रोफेसर, एक डिप्टिमॅजिस्ट्रेट, एक फॉरेस्ट ऑफिसर इसी तरह आठ सपूद बड़े औहदे पर पहुँचे थे।'' यहाँ स्पष्ट है शिक्षा सीमित परिवार तक ही रही है। इसके बारे में अर्जुन घरत का कथन है - ''उपन्यासकार नागार्जुन के अनुसार विद्या सिर्फ धन से प्राप्त नहीं होती, वे शिक्षा का लाभ विशिष्ट वर्ग तक सीमित रखने की प्रवृत्ति का विरोध करते है और मानव जाति की सामूहिक प्रगति के लिए शिक्षा आवश्यक मानते है।''[62]

रुपडली गाँव में स्वतंत्रता के बाद परिवर्तन दिखाई देता है। शिक्षा का प्रचार बढ़ जाने के कारण अंधविश्वास और रुढी परंपरा, भूत-पिशाच्च, मनौतियाँ, बलि प्रथा कम हो गई। लोग राजनीतिक और सामाजिक चेतना के प्रति अधिक जागृत हो गये। लेकिन साथ-ही-साथ भ्रष्टाचार जैसी दुष्प्रवृत्ति आ गई। अंग्रेज राज की विरासत में काँग्रेस को भ्रष्टाचार की देन मिली। काँग्रेसी नेता, पुलिस अधिकारी, सरकारी अधिकारी भ्रष्टाचार का केंद्र बन गये। शासन के नाम पर ये सब अधिकारी गरीब जनता का शोषण करने लगे, उन पर अत्याचार करने लगे। इसके विरोध में आवाज उठाने का कार्य जैकिसुन और उसके साथियों ने किया। जब राजा बहादुर कृष्णदत्त सिंह के घर डकैति पड गई तब पाठक और जैनारायण चोरों को छोडकर जैकिसुन को फँसाना चाहते थे। यहाँ स्पष्ट है अंग्रेजनिष्ठ जमीनदार आजादी के आंदोलन में क्रांतिकारों पर झूठे इल्जाम थोंपकर अपनी निष्ठा दिखाते थे। पाठक, जैनारायण इसके प्रतीक है। आजादी के बाद सामान्य व्यक्ति का जीना मुश्किल हो गया। जमीनदार, साहुकार, पूँजीपति तथा सरकारी अधिकारी नए-नए हथकंडे अपनाकर गरीबों को फँसाना चाहते है। पाठक इसका उदाहरण है। पाठक ने डेढ सौ रुपये देकर गूँगे चमार की हत्या करवा दी और इल्जाम

जैकिसुन तथा उसके साथियों पर लगाया। कुछ दिन जैकिसुन और उसके साथियों को जेल जाना पडता है, लेकिन छुटने पर वे दुगने जोर से गाँव की तरक्की करते है। गाँव के विकास के लिए तथा जुल्मों का प्रतिकार करने के लिए गाँव-गाँव में किसान तथा ग्राम कमेटियों की स्थापना की जाती है। किसान सभी की स्थापना एक प्रगतिवादी विचारधारा का प्रतीक है तो पाठक ग्रामविकास में रुकावट डालने के प्रवृत्ति का उदाहरण है। आजादी के बाद इन दो प्रवृत्तियों में संघर्ष चलता है। जिसके कारण ग्राम विकास का सपना 'सपना' ही रहा है। उपन्यासकार ने उस पर प्रकाश डाला है। रुपडली के नब्बे प्रतिशत लोगों का बरगदवाली जमीन तथा पुरानी पोखर के संघर्ष से संबंध था। इसके बारे में फैंसला सरकार के उपर सौपा गया। लोगों में आया हुआ परिवर्तन देखकर जमीनदार सत्ताधिश चिंतित हो गये। और उन्होंने काँग्रेस के विरोधी लोगों को सरकारी सहायता देने से इन्कार किया। रुपडली के किसानों को लघु सिंचाई योजना के अंतर्गत सरकारी मदद नहीं मिली क्योंकि रुपडली कम्युनिस्ट प्रभावित गाँव माना गया था। फिर भी किसानों ने अपना संघर्ष पीछे नहीं लिया। वे किसान नागार्जुन के विचारों के प्रतिनिधी है।

रुपडली में जाति बंधन कडे थे। उँची जाति के लोगों ने अपने स्वार्थ के लिए इसका उपयोग किया, जिसके कारण समाज में छुआछूत, अस्पृश्यता की समस्या निर्माण हो गई थी। परंतु शिक्षा के प्रभाव से ये जाति बंधन धिरे-धिरे टूटने लगे। पुरानी पोखर की रक्षा के लिए रुपडली से सभी जाति के लोग इकठ्ठा हो जाते है। लोग संगठन के कारण जमीनदार कुछ नहीं कर पाते, जातीयता और धर्म के बंधन टूटने लगे। श्रावणी पूर्णिमा के दिन हाजी करीमबक्स की कलाई पर भी किसी ने राखी बाँध दी थी। वह गुन गुना रहे थे -

''सारे जहाँ से अच्छा हिंदोस्ताँ हमारा
हम बुलबुले है इसकी यह गुलिस्ताँ हमारा!!''

लोग संगठन तथा किसान संगठन के कारण उन्हें अपने अधिकार मिल गये थे। यहाँ एकता की शक्ति का परिचय मिलता है।

नागार्जुन ने बाबा बटेसरनाथ में मिथिल आंचल की संस्कृति को समग्रता से उभारने के लिए लोकगीत एवं लोककथाओं का भी प्रयोग किया है। लोग कहानी के रुप में दुसाधों के वीर पुरुष महाराज सल्हेस और उसकी प्रियेसी कुसुम की कहानी मिलती है। इस प्रेम कथा को लेकर मिथिला आंचल में एक लोकगीत प्रचलित है-

''उमर बीत गई बाल पकने लग गए

..... ओ निठुर ! निर्मोही !!''[63]

ऐसे लोकगीत, लोकभाषा ग्रामीण जीवन की सांस्कृतिक धरोहर मानी जाती है।

नागार्जुन अपने 'बाबा बटेसरनाथ' उपन्यास में इसी तरह ग्रामीण जन-जीवन का चित्र रेखांकित किया है। उपन्यास में नागार्जुन ने भाषा की दृष्टि से एक नई तकनीक का प्रयोग किया है। एक वृक्ष को प्रमुख पात्र के रुप में चित्रित करते हुए उसके द्वारा अतीत का इतिहास, वर्तमान की स्थिति और भविष्य के संकेत दिये गये है. इसमें तत्सम, तद्भव और देशज शब्दों का स्वाभाविक रुप से प्रयोग किया है। अरबी, उर्दू, अंग्रेजी के शब्द भी अधिक मात्रा में पाये जाते है। इसमें सर्वथा परिमार्जित हिंदी का प्रयोग किया है। साथ-ही-साथ मुहावरे, कहावते तथा सूक्तियों का भी प्रयोग इसमें सजीवता और सरलता लाता है। 'बाबा बटेसरनाथ' तत्सम शब्द कतिपय है, जैसे पीताभ, वज्रपात, महर्षी, नीलांबर, स्वर्णित, आत्मशुद्धि आदि। तद्भव शब्द - अमावस, दाहिना, दुपहर, तँबा आदि। अरबी-उर्दू शब्द - कम्बख्त, मुतालिक, सिफारिश, इतमीनन, तनख्वाह, परेशानी, गजब, हरारत, सरेआम, जुल्म, तसल्ली, जायदाद, बुजुर्ग, मुकदमा आदि। अंग्रेजी शब्द - डिप्ति मॅजिस्ट्रेट, प्रोफेसर, फॉरेस्ट ऑफिसर, लोको इंजिनिअर, इनकमटैक्स, रेल्वे वर्कशॉप, पुलिस सुपरिटेण्डेट, हाई-कोर्ट आदि है। मुहावरे, कहावते और सुक्तियों का प्रयोग - 'आप बीती भी तो जगबीती का ही अंश होता है', 'भागते भूत की लंगोटी भली', 'बंभोला को आकघतूर', 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय', 'लोकानुकंपाय', 'सांप के बिल में हाथ डालना', 'मसे भिगना', 'एक से दो भला', 'कलेजा टुक-टुक होना', आदि से भाषा में रोचकता आयी है। और भाषा सुशोभित हुई है।

'बाबा बटेसरनाथ' में आत्मनिवेदनात्मक शैली और फ्लैश बैक का प्रयोग हुआ है। संवाद पात्रानुकूल एवं विषयानुकूल है। इसी कारण उपन्यास की भाषा सजीव प्रतीत होती है। नागार्जुन के शैली में नविनता और विविधता पाई जाती है। उनकी शैली सरल, सुबोध और सुगठित है। भावनाओं की तीव्र अभिव्यक्ति के समय भाषा कुछ अलंकृत और व्यंग्यात्मक बनी है। अलंकारों का प्रयोग चमत्कार प्रदर्शन के लिए न होकर भावाभिव्यक्ति में सहायक रुप में हुआ है। ''नागार्जुन की कथा भाषा का अपना अलग अंदाज है। सामान्यत: वह निखलिस भदेसी भाषा है। अपनी वर्णन प्रणाली में वे अत्यंत सहज है।''[64]

निष्कर्ष :-

नागार्जुन का 'बाबा बटेसरनाथ' अपने ढंग का अनोखा उपन्यास है। इसकी रचना आंचल विशेष के पात्रों और घटनाओं को लेकर की गई है। शिल्प की दृष्टि से लेखक ने इसमें सर्वथा अभिनव प्रयोग किया है। बरगद का मानवीकरण और उसका मनुष्य की भाषा में बोलना उपन्यास क्षेत्र में रुप शिल्प की दृष्टि से नया प्रयोग है। वटवृक्ष को सामाजिक प्राणी के रुप में चित्रित किया है। उसे बीहड़ जंगल में खड़ा न करेके सार्वजनिक रास्ते पर खडा किया है। अत: वह समाज के सुख-दु:ख से परिचित हो गया है। 'बाबा बटेसरनाथ' उपन्यास में बटेसरनाथ का व्यक्तित्व छाया हुआ है। उपन्यास का अधिकांश भाग बटेसरनाथ जैकिसुन को सुनाता है तथा मौजुद संघर्ष के लिए प्रेरणा देता है।

'बाबा बटेसरनाथ' में दरिद्र भारतीय समाज को अंकित किया है, और सर्वहारा वर्ग शोषकों के खिलाफ संघर्ष कर समाजवादी क्रांति के प्रयत्न का चित्रण किया है। प्रगतिशीलता, राष्ट्रभक्ति की नींव, नव समाज निर्मिती की आकांक्षा, समर्पण की भावना तथा भविष्य के प्रति सुनहरा सपना उपन्यास की मूल प्रेरणा है।

रुपडली के लोग अशिक्षित, रुढिग्रस्त, धर्मान्धिता के जाल में अटके हुअे, जमीनदार और अंग्रेजों के अन्याय, शोषण, अत्याचार में फसे हुअे लोग अपने रुढि परंपरा और अंधविश्वास को गले लगाकर जी रहे है। लेकिन धिरे धिरे शिक्षा के प्रसार के कारण जातीयता, अंधविश्वास, रुढि परंपरा के बंधन कम हो रहे है। एक नई दिशा की ओर लोग बढ रहे है।

लेखक खुद मार्क्सवाद से प्रभावित है। लेखक जिस क्रांति को चाहता था उसकी सूचकता ''कम्युनिस्ट प्रभावित गाँव' की विजय में दिखाई देती है। साम्यवाद, नये समाज की निर्मिति, सर्वहारा वर्ग के प्रति प्रेम तथा क्रांति की भावना, समाजसुधारवादी दृष्टिकोन के कारण 'बाबा बटेसरनाथ' को हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ है। आंचल के लोकजीवन को संपूर्णत: स्पष्ट करने का प्रयास इस उपन्यास में हुआ है। इसी कारण यहाँ ग्राम जन-जीवन का अनूठा रेखांकन प्रस्तुत हुआ है।

ग्रामवासियों में देशभक्ति, सामूहिकता, आजादी का आंदोलन, भगवान पर भरोसा, गांधी विचारों से प्रभावित ग्रामवासी, असहयोग आंदोलन, आजाद भारत तथा सरकार की सुधारनीति तथा विकसित गाँव आदि कई बातों का चित्रण उपन्यासकार ने किया है। बाबा बटेसरनाथ रुपडली गाँव का जीता-जागता इतिहास है, ऐसा कहना अनुचित नहीं होगा।

5) दुखमोचन :-

नागार्जुन के 'दुखमोचन' (1957) उपन्यास में टमकाकोइली ग्राम की नवनिर्माण की कथा है। आंचलिक संस्पर्श से युक्त इस उपन्यास का पात्र आदर्शवादी है। उपन्यास का नायक दु:खमोचन सचमुच दुसरों के दुख दूर करने में व्यस्त रहता है। गाँव की समस्या, जाँत-पाँत का टंटा, खानदानी घमंड, दौलत की धौंस, नफरत का नशा, अशिक्षा, लाठी की अकड, रुढी और परंपरा का बोझ आदि बाधाएँ दूर करने का कार्य दुखमोचन करता है। गाँव का पुर्ननिर्माण और नेतृत्व करने का कार्य दुखमोचन ही करता है। दुखमोचन यह पात्र उदात्त भावनाओं से युक्त आदर्शवादी है। सहकारीता, विधवा विवाह, अंर्तजातीय विवाह, सीमा प्रदेश, तस्करी व्यापार, गोहत्या, प्रायश्चित और मिट्‌टी के शालीग्राम का पूजन आदी के माध्यम से राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण नागार्जुन ने 'दुखमोचन' उपन्यास में किया है।

नागार्जुन के विचारों का वाहक दुखमोचन है। उसकी प्रगतिशील महत्वकांक्षी विचारधाराएँ नवचेतना को स्वर प्रदान करती है। नये पुराने संघर्ष में नवीनता का साथ देना, नागार्जुन के उपन्यासों का मुख्य लक्ष्य है इस श्रेणी में 'दुखमोचन' उपन्यास महत्त्वपूर्ण है। 'दुखमोचन' उपन्यास

का नायक दुखमोचन पाँच साल तक कलकत्ता में रहकर अपने गाँव में आया और गाँव की समस्या सुलझाना, जनसेवा के लिए कटिबद्ध रहना, ग्रामसुधार और ग्रामविकास का सफल प्रयत्न करना और नवचेतना निर्माण करना आदि कार्यों में उसने अपने आप को समर्पित किया है। दुखमोचन का कार्य नागार्जुन की ही विचारधारा है।

ग्रामव्यवस्था :-

दरभंगा जिले का टमकाकोईली गाँव गाँव नहीं था। पाँच हजार से उपर जनसंख्यावाली भारी बस्ती थी। दरअसल यह छोटी-छोटी कई बस्तियों का समूह था। गाँव के बीच में खेत और बाग फैले हुए थे। उत्तर-पुरब की तरू से कन्नी काटकर एक नदी निकल गयी थी। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की पक्की सडक, मीटर गेज, रेल्वे लाईन भी गाँव में है। लेकिन फिर भी गाँव में सुधार की कमी थी। इससे टमकाकोईल गाँव की झाँकी यहाँ दिखाई देती है। लगता है, धीरे-धीरे भारतीय ग्रामजीवन में परिवर्तन हो रहा है।

प्राकृतिक आपदा :-

प्राकृतिक आपदा ग्राम जीवन की सबसे प्रमुख समस्या है। प्राकृतिक आपदा में बाढ़, अकाल, भूकंप आदि है। टमकाकोइली ग्रामांचल में आयी बाढ़ एवं दुखमोचन की समाज-सेवा का चित्रण नागार्जुन ने इस उपन्यास में किया है। इस उपन्यास का नायक दुखमोचन आदर्श समाजसेवक का उदाहरण प्रस्तुत करता है। दुखमोचन बाढ़ पीडितों की सहायता के लिए लगातार बाहर में ही घुमता रहता था। गाँव में रामसागर की बूढी माँ का देहांत हो गया था। मधुकांत दुखमोचन को यह बात बताने आता है। दुखमोचन और वेणीमाधव वहाँ जाते है लेकिन लगातार वर्षा के कारण रामसागर की माँ का अंतिम संस्कार करना एक कठिन कार्य बनता है। बरसात से उत्पन्न समस्या का चित्रण करते हुअे लिखा है - ''बरसात के मौसम में गरीब गृहस्थों के यहाँ सूखी लकडियाँ पाना बडा ही कठिन है। लगातारा कई दिन कई रात तक जब बारीश होती रही हो तो उस कठिनाई का न ओर मिलेगा न छोर।''[64] इसी तरह बारीश की वजह से गरीबों की लकडियाँ गिली होती है और लाश को जलाने के लिए सुखी लकडियाँ भी

मिलना कठिन होता है। लेकिन दुखमोचन अपने घर के तख्ते निकालकर लकडियाँ जमा करता है। दुखमोचन ने गाँव के लोगों की राय से एक एकड जमीन श्मशान के लिए रखी थी, वहाँ दाह संस्कार किया जाता है। इसी तरह गाँव में कोई आपदा आने से, किसी ग्रामवासी पर संकट आने पर दुखमोचन फौरन वहाँ जाके संकट दूर करता है। स्पष्ट है भावुक, त्यागी, सेवावृत्ति का परिचय दुखमोचन है अर्थात नाम की सार्थकता उसमें दिखाई देती है।

टमकाकोइली ग्राम में आनेवाली महत्वपूर्ण समस्या थी बाढ़ और बीमारी। गाँव का जीवन इस समस्या से पीडित था। एक के बाद एक समस्या आती ही रहती थी। नागार्जुन ने अपनी रचना में इस पर प्रकाश डाला है। गाँव बाढ़ और बीमारी से पीडित था। बाढ़ के कारण आधी फसले बरबाद हो गयी थी। ज्यादातर खेतमजदुर अपना-अपना इलाका छोडकर पूरब-पश्चिम जाने वाली रेलगाडीयों पर सवार हो चुके थे। गाँव में बाढ़ आने की वजह से सब पानी जहरीला बन चुका था। इसी कारण गाँव के लोगों का खुन खराब हो गया था। गाँव में कालाजर और मलेरीया जैसी बीमारियाँ फैलने लगी। लोगों में एक नये किस्म की खुजली फैलने लगी। और वह खुजली दाद की तरह सारे बदन पर छाने लगी। इस खुजली की वजह से गोरा बदन साँवला दिखने लगा और साँवला बदन काला दिखने लगा। बदनपर खुजलाहट करने से चकत्ते निकल आते थे। और चार, छः रोज के बाद बदनपर चकत्ते ही चकत्ते निकल आते थे, वह चकत्ते कुरुप बना देते थे। वह एक प्रकार का चर्मरोग ही था। गॉव में यह रोग फैलने से सब लोग परेशान थे। उमा गगरानी के शब्दों में - ''सूखा, बाढ़, अकाल आदि प्राकृतिक प्रकोपों का शिकार भी अंततः निम्न वर्ग ही होता है। देश का बिहार प्रांत इन प्राकृतिक प्रकोपों से कई शताब्दियों से जूझता चला आ रहा है। चूंकि नागार्जुन और रेणु के उपन्यासों का कथ्य बिहार का जनजीवन ही है, इसीलिए सहज ही उनके उपन्यास में इसका चित्रण हुआ है।''[65] इसी तरह गाँव के लोगों को नैसर्गिक आपत्ति तथा बीमारियों का सामना करना पडता था।

दुखमोचन का भाई सुखदेव और उसकी पत्नी दोनों को भी यह चर्म रोग हो गया था। दुखमोचन ने होमियोपैथी और आयुर्वेद की किताबों में इस बीमारी के बारे में पढा मगर कुछ समझ में

नहीं आया। दुखमोचन ने दरभंगा जाकर सरकारी मेडिकल कॉलेज के एक चर्मरोग विशेषज्ञ डॉक्टर के पास दोनों की जाँच की, डाक्टर ने गंधक का इस्तेमाल करने को कहा और घाव को नीम के साबुन से अच्छी तरह धोने के लिए कहा। यह रोग गाँव के सत्तर प्रतिशत लोगों को हो गया था। दुखमोचन इसी इलाके के पाँच सात नेताओं और अफसर से मिलता है। उन्होंने मेडिकल काँलेज के अध्यापकों और छात्रों से सहायता की प्रार्थना की। जिला अधिकारियों तक प्रतिनिधि मंडल के मार्फत जनता की आवाज पहुँचाई। गाँव में गंधक और नारियल के तेल से भरे बीसियों डिब्बे ग्रामपंचायत दफ्तर में पहुँच गये। कुछ व्यापारियों ने सौ टिकिया नीम के साबुन की दी थी। लेकिन पंचायत गाँव की गुटबंदी नहीं तोड सकी। चौधरी, जमीनदार जैसे लोग अपनी पुरानी परंपरानुसार वर्तन करते। वह लोग जात-पात का टंटा, खानदानी घमंड, दौलत की घौंस, लाठी की अकड, नफरत का नशा आदि की वजह से गाँव के जनता की सामुहित उन्नति के मार्ग में रुकावटे डालते थे। इसपर नागार्जुन कहते है - ''मुसीबत के दिनों में शहरवालों से तत्काल सहायता पाना जितना कठिन था, उससे भी कठीन था सहायता में मिली हुई वस्तुओं और रकमों को सही जगहों तक पहुँचाना। स्वार्थी और लालची लोगों के सींग नहीं हुआ करते न कोई खास किस्म का झंडा पताका होता है उनका।''[66] इसीतरह सत्ता और पैसे के बल पर चौधरी, जमीनदार गरीब लोगों का शोषण करते है। स्पष्ट है उनकी लालची नीति और रुढी परंपरा, जात-पात, अमीरी-गरीबी का यथार्थ चित्रण यहाँ मिलता है।

गाँव में गरीबों के लिए चार सौ मन सरकारी गेहूँ आया था। गाँव के सबसे धनी व्यक्ति नित्यानंद बाबू थे। उनका आधुनिक ढंग का दुमजली मकान, सोलह जंगले थी। शोहरत थी। ग्रामोफोन सब से पहले उनके पास था। उसका पोता विलायत में बैरिस्टर बनने गया था। इतनी दौलत - शोहरत होने पर भी वह बहौत स्वार्थिक थे। उनकी सलाह थी - ''आधा अनाज लोगों में तत्काल बाँट देना और आधा तुम अपने घर में रख लेना ---।''[67] दुखमोचन पर गेहूँ बाटने की जिम्मेदारी थी। नित्याबाबू को गेहूँ मुक्त में चाहिए थे इसीलिए वह दुखमोचन को आधा गेहूँ रखने को कहते है। नित्याबाबू को अपनी बेटी के शादी में वो मुक्त का अनाज चाहिए था। अमीर होते हुअे भी नित्याबाबू गाँव के गरीब लोगों का

अनाज लेना चाहता था। लेकिन दुखमोचन ऐसा नहीं करता सह इस बात के लिए इन्कार करता है। स्पष्ट है नित्याबाबू अमीर होते हुअे भी उसकी स्वार्थि और लालची वृत्ति सामने आती है और दुखमोचन अमीर न होते हुअे भी गाँव के गरीब लोगों के लिए काम करके उसकी निस्वार्थि भावना हमारे सामने आती है+

नित्याबाबू जैसे स्वार्थी लोग चूप नहीं बैठते, वह गाँव के लोगों को परेशान करते ही रहते है। गाँव में कांचन दालन नामक हिस्सा है जहाँ कडी मेहनत करनेवाले मजदुर रहते है, उनमें चमार, जुलाहों, कायस्थ, ग्वालों, भूमिहारों का मकान और दस घर ब्राह्मणों के है। अच्छी बिरादरी वाले थोडे ही लोग है। भूमिहीनों की तादाद ज्यादा थी। चारसौ मन गेहूँ आया था। दुखमोचन ने वेणीमाधव और मधुकांत की मदत से सब बिदारदी वालों को गेहूँ बाँटा दिया। सबको बराबर गेहूँ मिल गया था। लेकिन नित्याबाबू जैसे लोगों ने अफवाह फैला दी कि गेहूँ को ऐसे है कि मशीन से निचोडे गये है और गेहूँ नहीं गेहूँ की सीठी है और जो भी गेहूँ लेगा उसे जबरन कोसी नदी के किनारे ले जायेंगे और अफसर लोग उससे महिनों बिना मजदुरी के काम करवा लेंगे और एक अफवाह फैला दी कि, अगले साल सरकार चार गुना ज्यादा अनाज वसुल कर लेंगी। इसी तरह अफवाह फैलाकर अमीर लोग, गरीब लोगों को डराकर उनके हिस्से का अनाज अपने कब्जे में लेकर अपनी स्वार्थि और झुठी नीति के दर्शन करवाते है। लेकिन दुखमोचन गरीब लोगों को समझा बुझाकर सस्ती किंमत पर अपने गेहूँ नित्या बाबू जैसे अमीर लोगों को न बेचने की सलाह देता है। गाँव के एक औरत ने दुखमोचन के कहने पर अपना अनाज बेचने के बजाय वापस किया क्योंकि उसके बेटे ने मनीऑर्डर से पचास रुपये भेजे थे और घर में अनाज बाकी था। इसीतरह गाँव के गरीब लोग इमानदारी से अपना काम करते थे। और दुखमोचन के अच्छी नीति के भी यहाँ दर्शन होते है।

नित्या बाबू के झूठी नीति का दुसरा उदाहरण यह है कि नित्या बाबू रामसागर को गांजे के मामले मे फँसा देता है और रामसागर पकडा जाता है। पुलिस उसे मधुबनी जेल में भेजती है। लेकिन दुखमोचन ही उसकी सहायता करता है। उसकी जमकर पैरवी करके उसे सिर्फ तीन हफ्ते की कैद होती है।

इसी तरह अमीर लोग एक बाद एक षडयंत्र करके गरीब लोगों को परेशान करते है और दुखमोचन ऐसे षडयंत्र से गरीब लोगों को बाहर निकालकर उनकी मदत करते है इस पर उपन्यासकार ने प्रकाश डाला है।

पंचायत व्यवस्था :-

टमकाकोईली जैसे और भी गाँवों में गरीब लोगों की स्थिति ऐसी ही थी। टमकाकोईली गाँव के पडोस के गाँव में एक किसान की खडी फसल जला दी गयी, दुसरे गाँव में किसी की फसल रात ही रात में काट दी गयी और गाँव वालों को पता तक नहीं चला। पाँच गाँवों की एक ही पंचायत होने के कारण टमकाकोईली में दुखमोचन और पुलकितदास पंच थे। पंचायत में फसल जलने की और काटने की शिकायत होने पर दुखमोचन ने थाने से सिपाहियों की मदद लेली। चौकीदारों की तादाद बढाई, ग्रामरक्षा समिति का संगठन किया और फसलों की निगरानी के लिए काफी तनख्वाह देकर पहरेदार बिठवाये। दुखमोचन ने रक्षा समीति के संगठन पर बल दिया। इसी पर पंचायत ने अनुमती देदी। इसी तरह दुखमोचन सिर्फ अपने ही गाँव की मदद और लोगों के दुख-दर्द दूर नहीं करता था। बल्कि आस-पडोस के गांवों के लोगों के दुख-दर्द दूर करके उनकी मदद करता था। यहाँ ऐसा लगता है, गाँवों में भी धीरे-धीरे परिवर्तन हो रहा है, पंचायत व्यवस्था, ग्रामसभा, रक्षा-समिति आदि के कारण लोगों में परिवर्तन होने लगा है। परिणामस्वरुप गांव में चेतना की लहर दौडने लगी।

नारी जीवन :-

ग्रामीण जन जीवन में नारी हमेशा शोषित ही रही है। उसमें भी विधवा नारी की स्थिति दयनिय होती है। यहाँ नागार्जुन ने विधवा पूनर्विवाह का चित्रण भी किया है। ''हिंदु समाज में विधवा पर दुहरा आक्रमण होता है। एक और वह समस्त मानवीय अधिकारों से वंचित, दीन-हीन, निराश्रित प्राणी है, दुसरी ओर समाज उसके चरित्र की नाप-जोख इतनी पैनी दृष्टि से करता है कि मानों ही धर्म का अस्तित्व केवल वैधव्य निर्वाह पर ही टिका है। इस दुहरे आक्रमण से विधवा को बाहर निकालने का कोई मार्ग नहीं।''[68] गाँव में दुखमोचन का मित्र वेणीमाधव की बहन माया विधवा है। उसका पहला विवाह

कुलीन मगर दरिद्र परिवार में हुआ था। उसका पति बाढ़ में उफनती 'बुढी गंडक' पार करते समय भवर में नांव उलटने से मर गया था। विधवा माया का पुनर्विवाह गाँव में अनहोनी घटना थी। जयमाधव का स्कूल का साथी कपील जिसने बनारस में रहकर बी.ए. तक पढाई की थी। कपील की पत्नी भी मर चुकी थी। माया और कपील का स्नेह संपर्क बेहद गाढा हो गया। कपील दुखमोचन की मदद से माया से अंतरजातीय पूर्नविवाह करता है। इसमें नित्याबाबू , टेकनाथ जैसे लोगों ने रोडे अटकाने का प्रयत्न किया, लेकिन गाँव के लोग कहते है - ''विधवा लडकी ने रँडुआ लडके से संबंध कर लिया तो क्या बुरा किया ? इधर - उधर भटकती और भरस्ट होती तो गाँव, कुल का नाम डुबाती --- वह अच्छा होता की यह अच्छा हुआ।''[69] इसीतरह दुखमोचन विधवा पुनर्विवाह कराकर गाँव की सामाजिक समस्या का निर्वाह करता है। यहाँ ऐसा लगता है दुखमोचन ने विधवा माया और कपील का विवाह कराकर नागार्जुन के विचारधारा को प्रकट किया है।

विकास योजना :-

टमकाकोईली ग्राम के दक्षिण में ढेड मील तक कच्ची सडक चौपट हो गयी थी। लघुसिंचाई और लोकलबोर्ड विभागवालों की सिर्फ लिखा पढी चल रही थी। ग्रामपंचायत ने जुरमाने के तौर पर सवा दो सौ रुपये वसूल किये थे वह रकम मुन्शी पुलकितदास के नाम डाकखाने में जमा थी। पंद्रह मन आनाज दु:खमोचन के जिम्मे था। दुखमोचन ने गाँव में सडक सुधार का काम शुरु किया। मजदुर आधी मजदूरी पर काम करने के लिए तैयार हो गये। संपन्न परिवारों के एक-एक आदमी बिना मेहनताना काम करने लगे। ग्राम रक्षा समिति के जवान मदद के लिए आ गये। असल काम मजदूर और मामूली ग्रामीण कर रहे थे। डिविजनल ऑफिसर को किसी की गुमनाम चिठ्ठी मिल गई कि निकटवर्ती खेतों से भूमि का थोडा थोडा हिस्सा बांध में मिलाया जा रहा है। और किसानों में असंतोष और झगडा हो सकता है, लाशे गिर सकती है। इस बात की तहकीकात करने के लिए एस.डी.ओ.साहब आये थे। लेकिन दुखमोचन ने गाँव का काम नक्शे के मुताबिक ही शुरु किया था। दुखमोचन ने और कपील ने साहब को सब बाते बताई। सडक का काम देखकर एस.डी.ओ. को प्रसन्नता हुई, उन्हेंाने विश्वास प्रकट किया कि

दो-तीन साल के अंदर ही अंदर कच्ची सडक पक्की हो जायेगी। इसी तरह ग्राम सुधारणा में कोई बाधाएँ उत्पन्न हो गयी तो उसका समाधान दुखमोचन ही करता है और गाँव के प्रगति के साथ-साथ राष्ट्र की प्रगति का लक्ष्य करके सबको कार्यान्वित करने के लिए पर्याप्त प्रयत्न नागार्जुन ने 'दुखमोचन' उपन्यास द्वारा किये है ऐसा लगता है।

प्राकृतिक आपदा :-

प्राकृतिक प्रकोपों के साथ गाँव में मानव निर्मित समस्याँ भी आती है। टमकाकोईली ग्राम में आग लगने की वजह से समूचे गाँव का नुकसान हो गया। ग्रामवासियों के साथ-साथ पशु-पक्षी भी नहीं बचे थे। गाँव में हरकुकी माँ हुक्का पी रही थी। तब सुलगती टिकिया से चिनगारियाँ भडक उठी, आग की वजह से दोनो घरों के छप्पर जल गये। उसी समय उडते बगुले हवा के झोकों में पास पडोस के छप्परों पर पडने लगे और एक एक करके सभी घरों को आग ने लपेट दिया। तेज हवा के कारण आस-पास के पच्चीसों घर जलकर भस्म हो गये। समूची वस्ती में खपरैल के मकान बीस-तीसही थे। छप्परोंवाले ज्यादा जल गये। घर का सामन बाहर निकालने के लिए लोग काम पे लगे। अधिकांश लोग आग को बुझाने के लिए घडे लेकर कुओ और पोखरों की तरफ भाग रहे थे। धुलभरी टोकरियाँ भी आग की लपेटों में लोग डालने लगे। दुसाधों, धनुको, ग्वालें और जुलाहों के टोले आग की लपेट में आ गये। आग अमीर गरीब भेद नहीं करती। ब्राह्मणों के घर, नित्याबाबू के घर, मास्टर टेकनाथ के घर को भी आग लगी थी। रास्तों के दोनो ओर के घर जल गये थे। कुएँ से सैकडों घडे पानी के निकाले गये थे। समुचा गाँव आग की लपेट में आ चुका था। पक्षियों के झुड आकाश में चक्कर काट रहा था। विशाल पेडों पर लटकने वाले सैंकडों घोंसले खाली हो गये थे। ''जहाँ-जहाँ रास्ते के दोनो और घर जल रहे थे, उधर से चलना भट्ठियों की दो कतारों के दरमियान होकर गुजरने जैसा लगता था। सभी परिवारों का एक जैसा हाल था। सब हताश थे, सभी रो रहे थे।''[70] आग की भयावहता और आग की वजह से लोगों की होने वाली हानि का वर्णन यहाँ नागार्जुन ने किया। जहाँ भी खुली जगह मिलती थी, वहाँ सामान जमा किया गया था। मैदानों और खेतों में भी सामान रखा था। अपने अपने सामान के पास बैठकर औरते और

बच्चे आग की भयानकता की वजह से रो रहे थे। बैलो, गाँयो, भैसो और बकरियों को गाँव के बाहर भगा दिया गया था ताकि आग की लपेट उन तक ना पहुँचे। गाँव में आग लगाने को अपराधी दुसाधों को ठहराया लेकिन दुखमोचन ने इसका कारण फूस के छप्पर होने का कारण बताया। इसी तरह गाँव में लगी आग सभी के घरों को जला रही थी। गाँव में प्राणीयों, पशुपक्षी भी आग की लपेट में आ गये थे। लेकिन दुखमोचन ने सबको मदत करने का कार्य किया। उसमें गाँव के अहित सोचने वाले नित्याबाबू थे, उनकी महत्वपूर्ण संदूक जिसमें महत्त्वपूर्ण कागजाद थे। वही आग से बचानी थी। नित्याबाबू के हरकतों को नजर अंदाज करके दुखमोचन मदत करता है। वेणी माधव जब दुखमोचन को नित्याबाबू की मदत करने पर टोकता है, तब दुखमोचन कहता है - ''मैं महसूस करता हूँ कि अपने गाँव के एक-एक व्यक्ति की सुरक्षा का दायित्व हम पर है अभी यह नहीं देखना है कि फलाँ दौलतमन्द फलाँ गरीब है, फलाँ हमें गालियाँ देता है, और फलाँ हमारा नाम लेकर सुबह श्याम शंख फूँकता है --- अभी एक-एक व्यक्ति हमारा अपना आदमी है वेणीमाधव!''[71] यहाँ दुखमोचन राग और द्वेष की भावना न रखकर, गरीब-अमीर का भेदभाव न करके गाँव के सभी लोगों की मदत के लिए निस्वार्थी और गाँव पर आस्था का दर्शन होता है।

अग्निकांड के बाद गाँव के पुनर्वसन कार्य शुरु हो गया। कई क्षेत्रों से सहायता मिलने लगी। पडोस के देहातों के लोगों ने भी मदद की। जिलाधिश और आंचलाधिकारी ने दो हजार और दौ सौ रुपये मदद के तौर पर दिये। व्यापारियों ने ढाई हजार नकद रकम, दो सौ मन अनाज, पंद्रह थान कपडा, आदि सामग्री दी। पडोस के गाँव के साठ जवान बिना मजदुरी के ही काम पर डटे थे। जिस हरकू की माँ की गलती के कारण आग लगी थी उसका घर भी तैयार करवाया गया।

जीविका का साधन :-

गाँवो में मुख्यत: लोगों की जीवनचर्या खेती पर ही निर्भर रहती है। खेती ही लोगों का मुख्य व्यवसाय होता है। टमकाकोईली गाँव में रब्बी की फसल अच्छी हुआी थी। आम भी अच्छेआये थे। गाँव में लगी हुई आग फसलों और आम के पेडों तक नहीं पहुँची थी। इसीलिए लोगों की फसल अच्छी हुई थी।

प्राकृतिक सौंदर्य :-

नागार्जुन के इस उपन्यास में प्राकृतिक सुषमा का चित्र मिथिला प्रेम को व्यक्त कर रहा है। ''यह देस कोस, यह माटी पानी, पहली वर्षा के बाद धानों के ये अंकुर, आमों से लदी ये अमराइयाँ, घौदों में लटके पकने को आतुर जामुन, गुलाबी फल - भार से विनम्र लीची की तुनक टहनियाँ, श्याम सलिल पोखर, ग्रीष्म की संजीदा और बरसात की बेहूदी नदियाँ।''[72] इसी गाँव में घौंदे, जामुन और आम के पेड थे। गाँव में मध्यमवर्ग के परिवारों की आमो की फसल कोई मामूली फसल नहीं थी। आम की बागों की वजह से समूचे गाँव में खिलखिलाहट, शोक-पुकार बात थी, बंदरों को खदेडना, बीच-बीच में हवा की हलकी सिसकी से पके आमों का टपकना और इन विलक्षण ध्वनियों की पृष्ठभूमि के तौर पर झींगुरों की झंकार। इसी तरह आम के बाग, खेत और फलों का सुंदर वर्णन नागार्जुन ने 'दुखमोचन' में किया है।

प्रथा-परंपरा :-

टमकाकोईली गाँव में अंधविश्वास और रीति रीवाज, धार्मिक मान्यताएँ बडे कडे नियमों से पाले जाते है। इस गाँव में यह रीवाज है कि अग्नि संस्कार के पश्चात लौटने पर पत्थर पर पैर धोकर घर में प्रविष्ट होते है, जिससे श्मशान की कोई गंदगी घर में न आ सके। क्योंकि शव यात्रा नंगे पाव ही की जाती है। दुखमोचन रामसागर की माँ का दाह संस्कार कर घर लौटता है तो - ''रिवाज के मुताबिक मामी ने पत्थर का टुकडा आगे रख दिया, तो दुखमोचन ने उस पर पैर रखकर पानी डाल दिया फिर भीगे कपडे बदले।''[73] इसी तरह 'दुखमोचन' में प्रथा का निर्वहन किया है।

अंधविश्वास :-

टमकाकोइली ग्राम में धार्मिक अंधविश्वास प्रचलित थे। गाँव में मास्टर टेकनाथ स्वार्थि वृत्ति का आदमी होते हुअे भी दुखमोचन उसे मदत करता है। इसका चित्रण इसमें आया है। गाँव में आग लग जाने से गाँव के सभी लोगों के घर जल गये थे। उससे टेकनाथ का बुढा बैल भी आग में झुलसकर मर गया था। लेकिन टेकनाथ को गाँव के लोग पापी मानकर सत्यनारायण की पुजा करने को कहा। अर्थात

सत्यनारायण की पुजा करने से संकट दूर होगा ऐसी उनकी धारणा है। यहाँ अंधविश्वास के दर्शन होते है। दुखमोचन टेकनाथ से प्रायश्चित की बात करता हुआ कहता है - "पंडितों के पुरान में पडना, मास्टर, वे तो पतिया- प्रायश्चित के खर्चीले, खटरागो में फँसाकर तुम्हारी बधिया ही बैठा देंगे।"[74]

जातीयता :-

गाँवों अभीतक जात-पात, भेद-भाव समाज में उँच-नीच का चित्रण मिलता है। नागार्जुन के 'दुखमोचन' उपन्यास में जाति-पाति का चित्रण आया है। माया और कपिल का विवाह जाति-पाति के बंधन को तोडकर हो रहा था। माया और कपिल की जातिया अलग-अलग थी। इसीलिए नित्याबाबू जैसे उँची जातिवाले लोग इन दोनों के ब्याह को रोकना चाहते थे, लेकिन दुखमोचन जात-पात पर्वा न करके उन दोनों के ब्याह का समर्थन करता है। इसी तरह शिक्षा के कारण गाँवों में जाँत-पाँत का भेदभाव कम होता जा रहा है। 'दुखमोचन' उपन्यास में जब दुखमोचन नित्याबाबू जैसे आदमी के खिलाफ जाकर माया और कपील का ब्याह रचाते है तब नित्याबाबू यह कथन करते है - "जाँत-पाँत और धर्म-कर्म पर संकट ही संकट लदता चला जा रहा है --- कल के छोकरे हम बूढों की नाक में कौडी बाँध कर रहे है।"[75] स्पष्ट है कि नागार्जुन में प्रबल आशावाद है। उनका अडिग विश्वास है कि वर्तमान जड सामाजिक व्यवस्था को बदलने में दुखमोचन जैसे लोगों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होगी। और दुखमोचन नागार्जुन के विचारों का वाहक ही है।

ग्राम चेतना :-

नागार्जुन ने 'दुखमोचन' उपन्यास में गाँव में हो रहे मजदुर आंदोलन का वर्णन किया है। गाँव के नव निर्माण में जो रास्ते का काम चल रहा था तब सभी मजदूरों ने इकठ्ठा होकर कार्य किया था। दुखमोचन के नेतृत्व में यह काम सफल भी हो गया। आंचलाधिकारी साहब ने मजदुरों के लिए अनाज और नकद मजदुरी दे दी लेकिन पानी भरने वाले मजदूरनियों को अनाज और नकद ठीक नहीं मिला तब उन्होंने दुखमोचन से शिकायत करके अपनी मजदुरी लेली। नागार्जुन ने सिर्फ 'दुखमोचन' उपन्यास में भारत में होने वाले मजदुरों के आंदोलन की ओर ही ध्यान नहीं दिया बल्कि अंतर्राष्ट्रिय स्तर

पर होने वाले मजदुर आंदोलन के बारे में विचार किया है। उपन्यास का नायक दुखमोचन का यह कथन - ''चाचा, लंदन में आजकाल बडी अशांति है। जहाजी मजदूर हजारों की तादाद में हडताल करने वाले है, समूचा शहर उनका साथ देगा।''[75]

इसी तरह उपन्यास में भारत के ही नहीं तो विदेश में भी मजदूर, किसान आदि का आंदोलन चलता है और उनका शोषण होता है। पूँजीपति अपने स्वार्थ के लिए उनका शोषण करते है, इसका चित्रण मिलता है।

उत्सव-पर्व :-

टमकाकोईली गाँव में झंडा फहराना एक उत्सव के समान ही माना है। गाँव में पूर्णिमा के दिन शुभंकर बाबु, चतुरी ठाकुर, इन्द्रशेखर सिंह, दारोगा, आंचल अधिकारी साहब, पिपरा बाजार के पाँच-सात नागरिक, पडोस के गाँवो के पंच भी आते है। बौधू चाचा के पुरवे से ढोल पिपही बजाने वाले आकर डट गये। छोकरे और छोकरियाँ गोल बांधकर देखने आ गये थे। लंबा-पतला हल्का हरा ताजा चमकिला 'चाँप' बाँस दालन बीस कदम आगे गाडे दिया गया, ध्वज दंड पर पाँच-सात पंचगुरा छाप दे डाली फिर सिंदुर लगा दिया। ढोल और पिपही बज रहे थे, लोग उत्सुक निगाहों से ध्वज को देख रहे थे। गाँव के सबसे बुर्जुग आदमी बौधू चाचा को दुखमोचन ने झंडा फहराने को कहा। बौधू चाचा ने खट से दोरी खींच ली और अशोक चक्र शोभित तिरंगा आकाश में फहराने लगा। तालियाँ और ढोल-पिपही का आवाज तेज हो उठी। इसके बाद कन्या पाठशाला के छात्राओं ने 'वंदे मातरम्' गाया। इसी तरह झंडा फहराने का कार्यक्रम एक उत्सव की तरह दुखमोचन ने मनाया। यहाँ झंडा फहराना 'वंदे मातरम्' गीत गाना राष्ट्रीय प्रेम और एकता का प्रतीक ही है। साथ ही गाँव के सभी लोग इसमें जाति-पाति न मानकर उच्च निचता को भूलकर इकठ्ठा होते है। यहाँ सामुहिकता के दर्शन होता है। उत्सव कैसे मनाये जाय ? इस पर भी यहाँ प्रकाश डाला है क्योंकि आज कई उत्सव सांप्रदायिक एकता के द्वारा बने है। इस हालत में यह उत्सव आदर्श लगता है।

नागार्जुन ने 'दुखमोचन' उपन्यास का निर्माण स्वाधीन देश की नवोत्थान चेतना के अनेक पक्षों को स्पष्ट करने के उद्देश्य से किया है। दुखमोचन उपन्यास का कथानक यथार्थ और हमारे आसपास का है। दुखमोचन एक आदर्शवादी और गांधीवादी पात्र के रुप में चित्रित हुआ है।

'दुखमोचन' उपन्यास में गाँव की नवनिर्माण की कहानी है। उपन्यास का नायक दुखमोचन मध्यमवर्गीय पात्र है। और वह संवेदनशील और परोपकारी है। वह अपनी सुखसुविधा की परवाह किये बिना दिन-रात गाँव के गरिबों की समस्या हल करने में लगा रहता है। गाँव में आये हुअे संकटों को वह दूर करता है। वह गाँव में यातायात की सुविधा, बांध का काम, चर्मरोग और कालाजर जैसी बीमारी में लोगों की मदत करता है। माया और कपील का विवाह जात-पात के विरुद्ध करता है। यह काम करके समाज में नई क्रांति करता है। गाँव में लगी आग में वह लोगों की मदत करके उनके घरों का पुर्ननिमाण करता है। वह नित्याबाबू, टेकनाथ, पूलकितदास जैसे स्वार्थि और अमीर लोगों की पर्वा किये बना लोगों की मदत करता है। इसी तरह दुखमोचन दुखों से मुक्ति दिलानेवाला पुरुष है, जो झुठे अभिमान, झूठी मर्यादा और अनावश्यक भावुकता जैसी सारी फिजूल बातों से अपने को दूर रखता है। जनसेवा के लिए कटिबद्ध इस पुरुष में कोई भेदभाव नहीं। ग्राम सुधार, और ग्राम विकास यही उसका लक्ष्य है। पोखरों की मरम्मत, कुओं की खुदाई ऐसे कई ठोस विकासात्मक कार्यों की योजना बनाता है। उसकी प्रगतिशील महत्वकांक्षी विचारधारा गाँव में नवचेतना के स्वर को वाणी प्रदान करते है।

''दुखमोचन में परदुखकातरता के साथ गहरी मानवीयता है, मानवता के प्रति गहरी आस्था है। वैचारिक मतभेद एवं भिन्न दृष्टि रखने वालों के प्रति गहरी आस्था है। वैचारिक मतभेद एवं भिन्न दृष्टिकोन रखने वालों के प्रति उसके मन में किसी प्रकार का द्वेषभाव नहीं रहता, जरुरत पडने पर वह उनकी सहायता भी करता है।''[76] अर्थात उनका व्यक्तित्व अनोखा ही रहा है।

नागार्जुन ने 'दुखमोचन'उपन्यास का कथन इस ढंग से गाढा गया है जैसे समस्याओं की पहली एक सूची बनाकर सामने रख ली गई है। पात्रों में दुखमोचन, टेकनाथ, माया, कपिल, लीलाधर

मध्यमवर्ग के पात्र है जो घटनानुसार आये है। घटनाविन्यास में स्वाभाविक संतुलन, नैतिक और सहज संतुलन आया है। भाषा शैली में गाली से लेकर वंदेमातरम् तक बोली से लेकर परिनिष्ठित भाषा तक सभी स्तरों का इस्तेमाल किया है। आँचलिक भाषा का प्रयोग अच्छी तरह से किया है। संवाद छोटे छोटे एवं पात्रानुकूल आये है। उपन्यास का उद्देश्य ग्राम का नवनिर्माण एवं गाँव के लोगों का दूख दूर करने में मदत और अंतरजातीय विवाह से सामाजिक प्रतिष्ठा निर्माण करना और इसीसे ग्राम की एवं राष्ट्र की प्रगति करना है।

निष्कर्ष :-

'दुखमोचन' उपन्यास गाँव की नवनिर्माण और विकास की कथा है। दुखमोचन ही कथा का नायक है जो सब के दुख दुर करता है। किसानों में नई चेतना भरता है। वह गाँव के लोगों में एकता और सामुहिकता निर्माण करता है। दुखमोचन में अंधविश्वास, रुढी परंपरा, धार्मिक मान्यताओं का चित्रण हुआ है। पुजापाठ, झंडा फहराने, उत्सव, प्राकृतिक सुष्मा का वर्णन आया है। साथ में गाँव में आयी समस्या जैसे बाढ़, आग और बीमारी की समस्या आदि का यथार्थ चित्रण किया है।

दुखमोचन में समाज सेवा, जनसेवा, गांधीवादी और आदर्शवाद आदि गुण आये है। जिसके बल पर वह ग्रामसुधार एवं ग्रामविकास करता है। उसके यह विचार संत गाडगेबाबा ग्राम अभियान के लिए मार्गदर्शक हो सकते है। 'दुखमोचन' उपन्यास आदर्शवाद एवं प्रचारवादिता से बोझिल तथा अस्वाभाविकता से युक्त है। लेखकीय विचारणा से चरित्र ढला है और उसके अनुरुप घटनाओं का एक परकोटा रच लिया गया है। आदर्शवाद के गहरे लेप के बावजूद लोक-जीवन की छवियाँ बीच-बीच में झलकती है।

दुखमोचन देश के नवनिर्माण के प्रवक्ता हैं और यह नवनिर्माण समाजवादी समाज की स्थापना का प्रयास है ऐसा लगता है।

निष्कर्ष :-

तृतिय अध्याय ''नागार्जुन के उपन्यासों में ग्रामजीवन'' में 'रतिनाथ की चाची' (1948), 'बलचनमा' (1952), 'नई पौध' (1953), 'बाबा बटेसरनाथ' (1954), 'दुखमोचन' (1956) आदि उपन्यासों में ग्राम जीवन का विस्तृत वर्णन किया है।

'रतिनाथ की चाची' में शुभंकरपूर और तरकुलवा का ग्रामजीवन, 'बलचनमा' में दरभंगा का ग्रामजीवन, 'नई पौध' में मिथिला के नौगाछिया ग्राम का ग्रामजीवन, 'बाबा बटेसरनाथ' में रुपडली का और 'दुखमोचन' में दरभंगा जिले के टमकाकोईली गाँव का ग्रामजीवन, लोगों में स्थित अज्ञान, अंधविश्वास, अशिक्षा, शोषण के विविध आयाम, उत्सव, पर्व त्यौहार, जमीनदारों की मनमानी, किसानों का शोषण और अपने हक के लिए आंदोलन, संगठन, नारी की स्थिति, विधवा नारी का शापीत जीवन, भौतिक सुविधा, शिक्षा, स्वास्थ्य, याता-यात के साधनों का अभाव, प्राकृतिक आपदायें उसकी अटकी हुई खेती, व्यवसाय, देवी-देवता संबंधी अज्ञान, धारणायें, मंत्र-तंत्र के प्रति मानसिकता, बलिप्रथा, राजनीतिक भ्रष्टाचार, उसका भयावह रुप, नेताओं की भ्रष्ट नीति आदि प्रभावी ढंग में उपन्यासकार ने चित्रित किया है। ये सभी उपन्यास ग्रामजीवन के प्रतिनिधी उपन्यास है। 'नई पौध' में अनमेल ब्याह को तोडकर उपन्यासकार ने सामाजिक मान्यता को उखाड दिया है और नये माप दंड स्थापित करने का प्रयास किया है। नागार्जुन के उपन्यासों में ग्रामजीवन के साथ प्रगतिशील दृष्टिकोन दिखाई देता है। गाँव में होने वाले सुधार, नई पीढी के नए विवाह, नई चेतना आदि को इन्होंने प्रमुख स्थान दिया है, इसीकारण से उपन्यास में प्रगतिशील दृष्टिकोन का यथार्थ चित्रण हुआ है। 'बाबा बटेसरनाथ' का जैकिसुन, 'बलचनमा' का रहमान, 'दुखमोचन' का दुखमोचन आदि प्रगतिवादी विचारधारा के प्रतिनिधि पात्र लगते है।

नागार्जुन के उपन्यासों में सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का चित्रण काफी प्रभावी बना है। नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में लोकगीत, लोककथा, उत्सव, पर्व, त्यौहार आदि का यथार्थ चित्रण किया है। 'बलचनमा' उपन्यास में लोकगीत एक लोककथा आने से ग्रामजीवन की सांस्कृतिकता का प्रभावात्मक

रुप उपन्यास में प्रस्तुत हुआ है। नागार्जुन ने लोकगीत तथा कथाओं का ही वर्णन नहीं किया बल्कि ग्रामीण बोली भाषा, संवाद, का आधार लिया है। नागार्जुन ने 'रतिनाथ की चाची' में सोरठ बाजार और बिकाऔ प्रथा आदि अनोखी प्रथाओं की चर्चा की है। सामाजिकता की दृष्टि से यह हीन प्रथा लगती है। 'दुखमोचन' में ग्राम विकास एवं ग्रामसुधार का चित्रण किया है। गाँव के प्रगति के साथ राष्ट्र की प्रगति का लक्ष्य यहाँ रखा है। 'बाबा बटेसरनाथ' में वृक्ष का मानवीयकरण करके उसके माध्यम से अकाल, गोरे अत्याचार, असहयोग कथा, व्यवस्था का असर आदि का वर्णन मिलता है। और 'नई पौध' में नई मान्यताएँ, नव जवानों का कार्य और गाँव में नव चेतना आदि पर प्रकाश डाला है। 'बलचनमा' आत्मकथात्मक उपन्यास है। इसमें जमीनदारों द्वारा हुअे अत्याचार, शोषण, दरिद्रता, अज्ञान और काँग्रेसी नीति का चित्रण हुआ है।

नागार्जुन काल्पनिक कथा लिखनेवाले, मनोरंजन के लिए साहित्य रचनेवाले साहित्यकार नहीं है। वे समाज जीवन का यथार्थ चित्रण करने वाले प्रभावी समाजवादी साहित्यकार है। नारी शोषण, अत्याचार, जमीनदारों की मनमानी, के खिलाफ आवाज उठाने वाले है। उनके उपन्यासों के पात्र क्रांतिकारी है। नई विचारों के वाहक दुख, अत्याचारों के वाहक है। अतः उनकी रचनाएँ मिथिला आँचल के ग्रामजीवन की करुण कहानी है, ग्रामजीवन की तसबीर है। ग्रामजीवन में स्थित अज्ञान, अंधविश्वास, अकाल, भूचाल, बाढ़, रुढी परंपराएँ , जातीयता, धार्मिक मान्यताएँ आदि का चित्रण करके उपन्यास में जान डाली है।

प्रगतिवादी नागार्जुन ग्रामव्यवस्था में परिवर्तन चाहते है। शोषण, अन्याय, अत्याचार, विधवा स्थिति के खिलाफ क्रान्ति करना चाहते है। इसके लिए वे संगठन, परीआ प्रवाह पर बल देते है। किसान, मजदूर, दलितों को संगठित दिखाकर अधिकार के लिए संघर्ष करने के लिए ललकारते है। उनके पात्र इसी दृष्टि से महत्वपूर्ण कार्य करते है। दुःखमोचन का नायक आदर्श चपकल का प्रयत्न है तो नई पौध के युवा संगठन आज की आवश्यकता है। लगता है नागार्जुन ने आलोच्य उपन्यास की कथा आज की प्रासंगिक एवं यथार्थ लगती है।

ग्राम जीवन के विकास में अंधविश्वास, अज्ञान, जातीयता, उच्चनिचता, भ्रष्टाचार, प्रमुख अडसर है। इसे हटाकर सभी ग्रामवासी एक होकर कार्य करे तो ग्रामों का विकास होगा। यही दु:खमोचन में रही है। विधवा जीवन में परिवर्तन लाने के लिए विधवा विवाह अनिवार्य है, इस पर उपन्यासकार ने बल दिया है। प्रगतिवादी चेतना, राजनीतिक चेतना के वाहक ये उपन्यास ग्रामजीवन तथा सामान्य जनता की अभिव्यक्ती ही है।

प्राकृतिक आपदा ग्रामजीवन के लिए चुनौती है। बाढ, अकाल, आगजली, भूचाल जैसी आपदा ग्रामजीवन में मुसीबतें रही है। सरकार अपनी ओर से इसे दूर करने की प्रयास करती है, मगर उससे भ्रष्ट्राचार की बदबू आती है। समाजसेवी, मानवता के नाम पर भ्रष्टाचार हो रहा है। इस पर भी प्रकाश डाला है। ग्रामपंचायत, युवा संगठन, इस कार्य में सहयोग दे तो ग्रामविकास होगा। जमीदारों की मनमानी एवं अत्याचार को रोकने के लिए लोगों में चेतना जागृती होना आवश्यक है, इस पर भी उपन्यासकार ने सोचा है।

नागार्जुन के आलोच्य उपन्यासों में इन सभी विचारों के दर्शन होते है। ये उपन्यास काल्पनिकता से नहीं बल्कि मानव जीवन की, ग्रामजीवन की कथा ही है। ये उपन्यास भाषा की दृष्टि से ग्रामजीण जीवन से संबंधित है। अंचल भाषा का अच्छा प्रयोग हुआ है। कथा, भाषा, शिल्प, कथ्य की दृष्टि से यह उपन्यास महत्वपूर्ण यथार्थ लगते है।

वस्तुत: नागार्जुन के यह उपन्यास आँचलिक उपन्यास कहे जाते है। इसी कारण इन्होंने विशिष्ट अंचल को कथावस्तु के माध्यम में रखकर ग्रामजीवन को चित्रित किया है। वह स्वाभाविक, वास्तविक, यथार्थ रुप में प्रस्तुत हुआ है। ये उपन्यास ग्रामजीवन की तसबीर ही है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. गणपतीचंद्र गुप्त - 'हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास', पृ.135.
2. शंभुसिंह - 'रांगेय राघव और आँचलिक उपन्यास', पृ.27.
3. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची', पृ. 117,118.
4. वही, पृ.65.
5. वही, पृ.21.
6. वही, पृ.54.
7. वही, पृ. 100, 101.
8. डॉ. बाळकृष्ण गुप्त - 'हिंदी उपन्यास : सामाजिक संदर्भ', अभिलाषा प्रकाशन कानपूर 1978, पृ.9-10.
9. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची', पृ.60, 61.
10. बाबूराम गुप्त - 'उपन्यासकार नागार्जुन', पृ.70.
11. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची', पृ.54.
12. अर्जुन घरत - 'कथाकार नागार्जुन एवं बाबा बटेसरनाथ', अतुल प्रकाशन, 1997, पृ.17.
13. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची', पृ.68.
14. वही, पृ.54.
15. वही, पृ.94.
16. डॉ. सुरेश बत्रा - 'हिंदी उपन्यासों में नारी अस्मिता', पृ.87.
17. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची', पृ.100.
18. बाबुराम गुप्त -' उपन्यासकार नागार्जुन', पृ.108.
19. डॉ. सरोजिनी त्रिपाठी - 'आधुनिक हिंदी उपन्यासों में वस्तु विन्यास', पृ.211.
20. नागार्जुन - 'बलचनमा', पृ.52.

21. वही, पृ.128.
22. बाबुराम गुप्त - 'उपन्यासकार नागार्जुन', पृ.147.
23. नागार्जुन - 'बलचनमा', पृ.31.
24. डॉ. सुमित्रा त्यागी - 'हिंदी उपन्यास आधुनिक विचारधाराएँ', पृ.178.
25. नागार्जुन - 'बलचनमा', पृ.43.
26. वही, पृ. 70.
27. बाबुराम गुप्त - 'उपन्यासकार नागार्जुन', पृ.152.
28. नागार्जुन - 'बलचनमा', पृ.32.
29. उमा गगराणी -' उपन्यासकार रेणू तथा नागार्जुन के रचना संसार का तुलनात्मक अध्ययन', भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1998, पृ.104.
30. नागार्जुन - 'बलचनमा', पृ. 167.
31. विवेकी राय - 'स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य और ग्रामीण जीवन', पृ.242.
32. डॉ. राधेशाम कौशिक - 'स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास का शिल्प विकास', पृ.177-178.
33. नागार्जुन - 'बलचनमा', पृ. 152.
34. संपा. भीष्म सहानी - रामजी मिश्र - भगवती प्रसाद निदारिया - 'आधुनिक हिंदी उपन्यास', पृ.65.
35. डॉ. बेचन - 'आधुनिक हिंदी उपन्यास उद्‌भव और विकास', पृ.206.
36. नागार्जुन - 'नई पौध', पृ.7.
37. वही, पृ. 31.
38. वही, पृ.25
39. वही, पृ. 33.
40. वही, पृ.41.

41. डॉ. बदरी प्रसाद - 'प्रगतिवादी हिंदी उपन्यास', पृ.125.

42. नागार्जुन - 'नई पौध', पृ.110.

43. वही, पृ. 115.

44. बाबूराम गुप्त - 'उपन्यासकार नागार्जुन', पृ. 109.

45. नागार्जुन - 'नई पौध', पृ. 92.

46. वही, पृ. 92.

47. 'आलोचना' - अक्तूबर 1954, पृ. 291.

48. रामदशरथ मिश्र - 'हिंदी उपन्यास एक अन्तयात्रा', पृ. 231.

49. डॉ. शशिभूषण सिंहल - 'हिंदी उपन्यास की प्रवृत्तिया', आगरा, 1970, पृ.131.

50. डॉ. जवाहर सिंह - 'हिंदी के आँचलिक उपन्यासों की शिल्पविधी' - नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली - 1986, पृ.296.

51. नागार्जुन - 'बाबा बटेसरनाथ', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 1954, पृ.54.

52. वही, पृ.47.

53. वही, पृ.42.

54. डॉ. जवाहर सिंह - 'हिंदी के आँचलिक उपन्यासों की शिल्पविधी' - नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली - 1986, पृ.296.

55. नागार्जुन - 'बाबा बटेसरनाथ', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 1954, पृ.50.

56. वही, पृ.56.

57. वही, पृ.63-64.

58. वही, पृ.55.

59. वही, पृ.50-51.

60. वही, पृ.66.

61. देवेश ठाकुर - 'मैला आँचल की रचना - प्रक्रिया', वाणी प्रकाशन, 1987, पृ.69

62. अर्जुन घरत - 'कथाकार नागार्जुन एवं बाबा बटेसरनाथ', अतुल प्रकाशन, 1997, पृ.119.

63. नागार्जुन - 'बाबा बटेसरनाथ', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1954, पृ.31-32.

64. नागार्जुन - 'दुखमोचन', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972, पृ.11.

65. उमा गगराणी - 'उपन्यासकार रेणू तथा नागार्जुन के रचना संसार का तुलनात्मक अध्ययन', भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1998, पृ.103.

66. नागार्जुन - 'दुखमोचन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972, पृ.22.

67. वही, पृ.32.

68. डॉ. बाळकृष्ण गुप्त - 'हिंदी उपन्यास : सामाजिक संदर्भ', अभिलाषा प्रकाशन कानपूर 1978, पृ.10.

69. नागार्जुन - 'दुखमोचन', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972, पृ.99.

70. वही, पृ.129.

71. वही, पृ.130.

72. वही, पृ.158.

73. वही, पृ.12.

74. वही, पृ.34.

75. वही, पृ.74.

76. वही, पृ.33.

---xxx---